अंतराल

क्रम

गन्तव्य की ओर

ध्येय पहुँचने की तैयारी !

कितना बीहड़ दुर्गम रे पथ,
उलझ-उलझ जाता जीवन-रथ,
पर, रोक नहीं सकती मेरी गति को कोई भी लाचारी !
ध्येय पहुँचने की तैयारी !

माना झंझा मुझको घेरे,
पर, चरण कहाँ डगमग मेरे ?
किंचित् न कभी विपदाओं के सम्मुख मैंने हिम्मत हारी !
ध्येय पहुँचने की तैयारी !

इस जीवन में कितनी हलचल,
बिखरा मिलता है गरल-गरल,
साधन-हीना, सम्बल-हीना, पर संघर्ष किये हैं भारी !
ध्येय पहुँचने की तैयारी !

इस पथ पर चलना बड़ा कठिन,
इस पथ पर जलना बड़ा कठिन,
जो इस पथ पर टिक पाया, वह केवल जीने का अधिकारी !
ध्येय पहुँचने की तैयारी !



साधना

ग्राशा में घोर निराशा को ग्राज बदलना सीख रहा हूँ !

दुख की निर्मम बदली में यह दीप जलेगा कब तक मेरा,
मौन बनी सूनी कुटिया में प्यार पलेगा कब तक मेरा ?
ग्राते हैं उन्मत्त बवंडर, पागल बन तूफान भयंकर,
रोक सका क्या ? बुझने का क्षण ग्रौर टलेगा कब तक मेरा ?
तीव्र झकोरों में झंझा के पल-पल जलना सीख रहा हूँ !
ग्राशा में घोर निराशा को ग्राज बदलना सीख रहा हूँ !

कितने ही ग्ररमान दबाये नव-जीवन की प्यास लिये हूँ,
भूला-भटका ग्रनजाना-सा ग्राँसू का इतिहास लिये हूँ,
ग्रपने छोटे से जीवन में ग्रविचल साहस-धैर्य बँधाये,
मिटी हुई ग्रभिलाषाग्रों में मिलने का विश्वास लिये हूँ,
शून्य डगर पर मैं जीवन की गिर-गिर चलना सीख रहा हूँ !
ग्राशा में घोर निराशा को ग्राज बदलना सीख रहा हूँ !

मत बोलो मैं ग्राज ग्रकेला स्वर्ग बसाने को जाता हूँ,
मौन-साधना से ग्रन्तर को ग्राज जगाने को जाता हूँ,
रज-कण से ले उन्नत भूधर तक सुन कंपित हो जाएंगे,
ग्रपने ग्राहत मन को फिर से ग्राज उठाने को जाता हूँ,
निर्मम जग के भारी संघर्षों में पलना सीख रहा हूँ !
ग्राशा में घोर निराशा को ग्राज बदलना सीख रहा हूँ !

मत समझो मुझमें, ज्वालाओं का भीषण विस्फोट नहीं है,
तूफानों के बीच भँवर में आँचल तक की ओट नहीं है,
मत समझो, अगणित उच्छ्वासों का भी मूल्य नहीं कुछ मेरा,
कौन जानता ? इस अंतर में असफलता की चोट नहीं है,
दुर्गम-बीहड़ जीवन-पथ के कंटक दलना सीख रहा हूँ !
आशा में घोर निराशा को आज बदलना सीख रहा हूँ !



स्नेह-सुधा-जल...

स्नेह - सुधा - जल बरसा दूंगा टूटी फूटी दीवारों में !

मैं सुन्दर विश्व सजा दूंगा,
मैं सुखमय स्वर्ग बसा दूंगा,
जीवन - संगीत सुना दूंगा,
हृत्-पीड़क शत-शत बन्धन में, जकड़े युग के प्राचीरों में !
स्नेह - सुधा - जल बरसा दूंगा टूटी फूटी दीवारों में !

नृत्य मनोहर रुनझुन - रुनझुन,
गुंजित कर संसृति का कण-कण
प्राणों में भर जीवन-धड़कन,
सरगम का मधु-स्वर भर दूंगा काली-काली जंजीरों में !
स्नेह - सुधा - जल बरसा दूंगा टूटी फूटी दीवारों में !

जन उर में द्रोह उठा दूंगा,
यौवन का तेज जगा दूंगा,
उन्नति की राह बता दूंगा,
मूक अभावों के जीवन में, घोर निराशा में, हारों में !
स्नेह - सुधा - जल बरसा दूंगा टूटी फूटी दीवारों में !



जीवन-पथ के राही से

बन्धनों में, हार में रोना नहीं, रोना नहीं !

राह है यह ज़िन्दगी की एक पल रुकना न होगा,
देख सीमाहीन पथ को बीच में थकना न होगा,
ज्वार उठता हो उदधि में, मृत्यु-मुख में प्राण जाएँ,
गाज गिरती हो अवनि पर या दहलती हों दिशाएँ
पर, हृदय-साहस कभी खोना नहीं, खोना नहीं !
बन्धनों में, हार में रोना नहीं, रोना नहीं !

हो अँधेरी रात चाहे, घोर गर्जन हो प्रलय का,
घेरले झंझा भयानक, नृत्य हो चाहे अनय का,
मानकर चलना कि साथी हैं सभी झोंके भयंकर,
ले चलेंगे पार फर-फर व्योम-पथ से जो उड़ाकर,
एक पल भी भय-ग्रसित होना नहीं, होना नहीं !
बन्धनों में, हार में रोना नहीं, रोना नहीं !



मनुज-जीवन

क्या यही है मनुज जीवन ?

मन दुखी है इसलिये तुम मौन स्वर में रो रहे हो,
हो रहे बेचैन इतने आश सारी खो रहे हो,
पर, कभी मिलता सरस सुख, हँस लिया करते उसी क्षण !
क्या यही है मनुज - जीवन ?

हाथ अपने यदि चलाते तो चलाते बन्धनों में,
है नहीं तेज़ी तनिक भी अब मनुज-उर-धड़कनों में,
सत्य, शिव, सुन्दर कहाँ ? जीवन लिए है घोर उलझन !
क्या यही है मनुज - जीवन ?

कर न सकता न्याय कोई स्वार्थ में जकड़ा हुआ जग,
बढ़ रहीं अगणित व्यथाएँ, है मधुर जीवन न प्रतिपग,
हो गया है आदमी का आज तो पाषाण का मन !
क्या यही है मनुज - जीवन ?



जीवन-तरु

ये मुरझा कर टूट रहे हैं, मेरे जीवन-तरु के पल्लव !

दुख की उष्ण हवाओं ने आ सोख लिया सब प्राणों का रस,
कोमल दृढ़तर सब अंगों को हाय, शिथिल कर डाला बरबस,
रुधिर प्रवाहित करने वाली गतिहीन पड़ी तन की नस-नस,
रह जाते अरमान अधूरे, अर्ध-डगर पर ही तरस-तरस,
उर में अभिलाषाएँ अगणित रह जातीं क़ैद वहीं बेबस,
मेरे जीवन का नंदन-वन है पतझर-सा सूखा तहस-नहस,
भीषण रूप बना मरघट का, है मौन खगों का मधु कलरव !
ये मुरझा कर टूट रहे हैं, मेरे जीवन-तरु के पल्लव !

बिन विकसे खोईं कितनी ही सुरभित कलियाँ, कोमल किसलय,
डाली-डाली सूख रही है, पर सहता जाता मौन हृदय,
प्राण प्रकम्पित करने वाले स्वर में मन की कोयल गाती,
सूखी-सरि के निर्जन तट पर करुणा का संगीत बहाती,
आँसू की धाराएँ मिलकर गंगा-यमुना-सी लहरातीं,
पूरी गति से बाढ़ उमड़कर उर-घाटी में आ चढ़ जाती,
पर, आज बहाये ले जाती काँटों का दुखदायी वैभव !
ये मुरझा कर टूट रहे हैं, मेरे जीवन-तरु के पल्लव !



आँसुओं का मोल

मूल्य मेरे आँसुओं का कब जगत पहचान पाया ?

देखता ही तो रहा वह आँसुओं की धार अपलक,
दो नयन निर्मम लिये बस स्नेह से हों रिक्त दीपक,
वेदना के स्वर मिलाकर किस मनुज ने गान गाया ?
मूल्य मेरे आँसुओं का कब जगत पहचान पाया ?

कौन है जो सिसकियों का, मूक आहों का, मरण का,
पंथ सहचर ज़िन्दगी का मिल गया हो ठीक मन का,
कौन है जिसने हृदय की उलझनों से त्राण पाया ?
मूल्य मेरे आँसुओं का कब जगत पहचान पाया ?



बहने देना...

बहने देना आँसू मेरे, किन्तु, स्नेह-उपहार न देना !

पथ पर जब मैं रुक-रुक जाऊँ,
प्रति पग पर जब झुक-झुक जाऊँ,
तूफ़ानों से लड़ते-लड़ते,
झंझा में फँस कर थक जाऊँ,
गिर-गिर चलने देना मुझको, क्षण भर भी आधार न देना !
बहने देना आँसू मेरे, किन्तु, स्नेह-उपहार न देना !

ज्वार उठे सागर में चाहे,
नौका फँसे भँवर में चाहे,
देख घिरी घनघोर घटाएँ,
धड़कन हो अन्तर में चाहे,
बढ़ने देना मुझको आगे, हाथों में पतवार न देना !
बहने देना आँसू मेरे, किन्तु, स्नेह-उपहार न देना !

अंधकार-मय जीवन-पथ पर,
कुश-कंटक मय जीवन-पथ पर,
संबलहीन अकेला केवल,
अपना अन्तस्तल ज्योतित कर,
मैं उठता-गिरता जाऊंगा, सुलभ-ज्योति संसार न देना !
बहने देना आँसू मेरे, किन्तु, स्नेह-उपहार न देना !



विनाश

मैं मिटता जाता हूँ प्रतिपल !

तारे छिप जाते अम्बर में,
लहरें मिट जातीं सागर में,
वीणा के स्वर लय हो जाते,
बहते मारुत के सर-सर में,
काल-धार में एक दिवस मैं भी लय हो जाऊंगा चंचल !
मैं मिटता जाता हूँ प्रतिपल !

कुसुमों का दो-दिन का यौवन,
दो-दिन का भ्रमरों का गायन,
जब दो-दिन में ही सीमित है,
उनकी इच्छाओं की धड़कन,
दो-दिन में मेरी भी काया नश्वर हो जाएगी दुर्बल !
मैं मिटता जाता हूँ प्रतिपल !

दिन छिपता उड़ती धूलि गगन,
निशि ढलती जाती है प्रतिक्षण,
युग बीत रहे अपनी गति से,
होता रहता जग - परिवर्तन,
मैं भी जीवन-पथ पर चलता जाता लेकर अंतर हलचल !
मैं मिटता जाता हूँ प्रतिपल !



विकास

मैं खिलता जाता हूँ प्रतिपल !

तरुवर की डालों पर कलियाँ,
नभ में झिलमिल तारावलियाँ,
धीरे-धीरे आ खिल जातीं लेकर जीवन की ज्योति नवल !
मैं खिलता जाता हूँ प्रतिपल !

सूखी सरिता छल-छल जल भर,
बूँदें मरुथल टप-टप पाकर,
जब जीवन पा जाता कण-कण, मैं भी भर लेता उर में बल !
मैं खिलता जाता हूँ प्रतिपल !

भर कर मीठा हास जगत में,
आया नव मधुमास जगत में,
मेरे स्वर भी बोल उठे, जब कूक उठी पेड़ों पर कोयल !
मैं खिलता जाता हूँ प्रतिपल !



जागरण

आज जीवन में सफलता की मुझे आहट मिली है !

आज तो आराधना का
इस हृदय की साधना का
फल मिलेगा, बल मिलेगा,
आज तो पतझार में अगणित नई कलियाँ खिली हैं !
आज जीवन में सफलता की मुझे आहट मिली है !

उठ रही हैं मुक्त लहरें,
भाव रोदन के न ठहरें,
पास यह गन्तव्य आया
हार का बन्दी नहीं अब, जीत मुझसे आ हिली है !
आज जीवन में सफलता की मुझे आहट मिली है !

मिट चुकी है रात काली,
छारही है आज लाली,
हो रहा कलरव मनोहर
जागरण-बेला यही है, प्राण ने पहचान ली है !
आज जीवन में सफलता की मुझे आहट मिली है !



रस-संचार

आज रस-संचार !

अश्रु के ले सिंधु को
दुःख उर से खोगया,
यह युगों के बोझ का
भार हलका होगया,
गीत मन ने गा लिया, गूँजती झंकार !
आज रस-संचार !

धूप जीवन की गई
शांत प्राणों की जलन,
बादलों की छाँह में
मिल गया शीतल पवन,
प्रेम प्रिय का पागया मौन कर स्वीकार !
आज रस-संचार !

लय निमिष में हो गये
कष्ट सब दिन रात के,
होगया अन्तर हरा
वाटिका-सम-पात के,
सुख चिरन्तन पा गया स्वर्ग कर साकार !
आज रस-संचार !



वरदान

खुल गये सब बंद मन के द्वार !

सिन्धु करता जब गरज अपहास,
नाचती थी मृत्यु आकर पास,
आँधियों की गोद में जब हो रहा था–अब गिरा, हा ! अब गिरा, तब
हाथ में दृढ़ आगई पतवार !
खुल गये सब बंद मन के द्वार !

याचना करता रहा हैरान,
पंथ पर विक्षुब्ध मन म्रियमाण,
नग्न भूखी जिन्दगी साकार हो जब ले रही थी साँस अन्तिम
मिल गये तब विश्व के अधिकार !
खुल गये सब बंद मन के द्वार ?

डूबते से जारहे थे प्राण;
शुष्क निर्जन था सकल उद्यान,
पीत-पत्तों को गँवाकर डालियाँ जब लुट गईं तब, दूर से आ
चल पड़ी मधुमय बसन्त-बयार !
खुल गये सब बंद मन के द्वार !



पतझर और बसंत

उड़ रही है धूल !
उड़ रही है धूल !
डालियों में आज
खिल रहे हैं फूल !
खिल रहे हैं फूल !

झर रहे हैं पात,
भर रहे हैं पात,
आज दोनों बात !
आरहा ऋतुराज
सृष्टि का करता हुआ
फिर से नया ही साज़ !
पिघला बर्फ़
नदियों के बढ़े हैं कूल !
उड़ रही है धूल !



प्रभात की चाह

बोले जीवन के मधुवन में कोयल का स्वर, कोयल का स्वर !

लद जाये कुसुमों से डाली,
अम्बर में फूट पड़े लाली,
बह चले सुरभिमय मंद पवन,
छा जाये जग में हरियाली,
गा दे गीत खगों की टोली नीरव जीवन-सरिता तट पर !
बोले जीवन के मधुबन में कोयल का स्वर, कोयल का स्वर !

रजनी मौन भरे जीवन से,
भ्रमरों के गुन-गुन गुंजन से,
जग कोलाहल मय हो जाये,
छूट पड़े जीवन बंधन से,
डोल उठे संसृति का अणु-अणु प्राणों में शक्ति नई पाकर !
बोले जीवन के मधुबन में कोयल का स्वर, कोयल का स्वर !

जागे सोया मानव-जीवन,
बदले जग का जीवन-दर्शन,
निर्धनता, व्यथा मिटे सारी,
हो नवल विश्व, नूतन तन-मन,
मिट जाये सपनों की दुनिया, लहराये जागृति का सागर !
बोले जीवन के मधुबन में कोयल का स्वर, कोयल का स्वर !



प्रभात

विहग सुनसान में, तरु पर, प्रभाती-गान जीवन का
सुखद, उन्मुक्त स्वर से, एक लय में गा रहा है क्यों ?

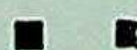
सितारे छिप गये सारे, अँधेरा मिट गया सत्वर,
उषा-साम्राज्य का अनुचर दिखाई दे रहा दिनकर,
गगन में मौन एकाकी, गई है ज्योति पड़ फीकी,
छिपाता मुख जगत् से चाँद उड़ता जा रहा है क्यों ?
विहग सुनसान में, तरु पर, प्रभाती गान जीवन का
सुखद, उन्मुक्त स्वर से, एक लय में गा रहा है क्यों ?

अलस तन्द्रा भरी चुपचाप थी दुनिया अभी सोई,
मनुज सब स्वप्न में डूबे सचाई रूप की खोई,
जगा जन-जन, जगा हर मन, मुखर वातावरण प्रतिपल
नया संदेश, जीवन जागरण-क्षण पा रहा है क्यों ?
विहग सुनसान में, तरु पर, प्रभाती गान जीवन का
सुखद, उन्मुक्त स्वर से, एक लय में गा रहा है क्यों ?



री हवा !

री हवा !
गीत गाती आ,
सनसनाती आ,
डालियाँ झकझोरती
रज को उड़ाती आ !
मोहक गंध से भर
प्राण पुरवैया
दूर उस पर्वत-शिखा से कूदती आ जा !
ओ हवा !
उन्मादिनी यौवन भरी
नूतन हरी इन पत्तियों को चूमती आ जा !
गुनगुनाती आ,
मेघ के टुकड़े लुटाती आ !
मत्त बेसुध मन
मत्त बेसुध तन
खिलखिलाती, रसमयी, जीवनमयी,
उर-तार झंकृत
नृत्य करती आ !
री हवा !



रात

चाँदनी छिटकी हुई बेछोर,
नाचता है उल्लसित मन-मोर,
नींद आँखों से उलझकर हो गई है दूर !

प्राण ने सुखमय नया संसार,
आज पलकों में किया साकार,
मूक नयनों का तभी यह बढ़ गया है नूर !

है बड़ी मोहक रुपहली रात,
दूर पूरब से बहा है वात,
व्योम में छाया हुआ निशि का नशा भरपूर !

प्राणमय कितना निशा का गान,
सुन जिसे रहता नहीं है ध्यान,
है छिपा कोई कहीं पर सृष्टि-भेद ज़रूर !



ढलती रात

स्वर्ग का ऐश्वर्य
धरती पर सहज बिखरा हुआ,
आकाश-पथ की चाँदनी की धूल से निखरा हुआ !
जगमगाती रात
ठहरे पात,
निर्जन में अकेली मूक
जीवन की पहेली-सी
रुकी सी रात !
अंतर-तृप्ति की छाया
बनी प्रतिमा सलज्जा, मुग्ध सोई रात
मानो सब गई अपना कहीं पर हार !
धुँधली सी गईं बन गूढ़ रेखाएँ
बतातीं होगईं हैं पूर्ण इच्छाएँ
अरी ! शीतल सकुचती रात !
मत कर साधना ऐसी—
न हो नव भोर,
सपनों की न टूटे रजत-राका-रश्मियों की डोर !
री पगली ! वही तो दे सकेगा
शक्ति, प्राणों में नया उत्साह, गति, कम्पन !
मचा यों शोर—
हो नव भोर !



मेघों से

दौड़ते आकाश-पथ से जारहे किस देश को घन ?

देख जिनको कर रही सज्जा प्रकृति-बाला,
देख जिनको आज छलकी पड़ रही हाला,
जो लगाये आस, उनको छोड़कर क्यों जा रहे घन ?
दौड़ते आकाश-पथ से जारहे किस देश को घन ?

हर तृषित की प्यास को तुमको बुझाना है,
हर भ्रमित को राह भी तुमको सुझाना है,
पर, बिना बरसे अरे तुम जारहे किस देश को घन ?
दौड़ते आकाश-पथ से जारहे किस देश को घन ?

यों तुम्हारा देर से आना नहीं अच्छा,
फिर गरज कर क्रोध में जाना नहीं अच्छा,
एक पल रुक कर बताओ; जारहे किस देश को घन ?
दौड़ते आकाश-पथ से जारहे किस देश को घन ?



घटाएँ

छागये सारे गगन पर,
नव घने घन मिल मनोहर,
दे रहे हैं त्रस्त भू को आज तो शत-शत दुआएँ !
देख लो, कितनी अँधेरी हैं घटाएँ !

कर रहा है व्योम गर्जन,
मंद्र ध्वनि से, वाद्य सा बन,
चाहता देना सुना जो आज सारी स्वर कलाएँ !
देख लो, ये व्योम-चेरी हैं घटाएँ !

अरुक बरसो बिन्दु जल के,
तीव्र गति से, ना कि हलके,
विश्व भर में वृष्टि करदो दूर हों सारी बलाएँ !
देख लो, कितनी घनेरी हैं घटाएँ !



जल-वृष्टि

पानी बरसा, पानी बरसा !

देख रहे थे आसमान को जब प्यासी आँखों से जन-जन,
सिर पर ज्वाला का बोझ लिये जब साँसें भरते थे तरु-गण,
शान्त हुए, जैसे ही टप-टप पानी बरसा, पानी बरसा !

लरज-लरज कर बिजली चमकी, घुमड़-घुमड़ कर गरजे नव-घन,
भीग गया रे दूर क्षितिज तक नंगी शुष्क धरा का कण-कण,
जगती को नव जीवन देने पानी बरसा, पानी बरसा !

इस जल में नूतन जग की रचना का सफल प्रयास छिपा,
इस जल में त्रस्त मनुजता का सुन्दर निश्छल मधु हास छिपा,
नवयुग का नव सन्देश लिये पानी बरसा, पानी बरसा !



दीपक

मूक जीवन के अँधेरे में, प्रखर अपलक,
जल रहा है यह तुम्हारी आश का दीपक !

ज्योति में जिसके नई ही आज लाली है,
स्नेह में डूबी हुई मानों दिवाली है !

दीखता कोमल सुगन्धित फूल-सा नव-तन,
चूम जाता है जिसे आ बार-बार पवन !

याद-सा जलता रहे नूतन सवेरे तक,
यह तुम्हारे प्यार के विश्वास का दीपक !



एकाकीपन

यह आज अकेलेपन पर तो मन अकुला-अकुला आता है !

सुनसान थका देता मन को,
एकांत शिथिल करता तन को,
अब और नहीं एकाकीपन,
जीवन के साथ रहे प्रतिक्षण,
यह उलझा-उलझा-सा यौवन अब तो भार बना जाता है !
यह आज अकेलेपन पर तो मन अकुला-अकुला आता है !

कब तक सूनी राह रहेगी,
कब तक प्यासी चाह रहेगी,
इतनी काली सघन निशा में,
चलना कब तक एक दिशा में,
यह रुका हुआ जीवन, उर में भाव निराशा के लाता है !
यह आज अकेलेपन पर तो मन अकुला-अकुला आता है !



साथी से

मिले हो आज जीवन की डगर पर; किन्तु आगे साथ मेरा सह सकोगे क्या ?

अभी जीवन-निशा पहला प्रहर, तारे गगन में आ, अनेकों आ, रहे हैं छा,
सघनतम आवरण छाया, नहीं दिखती सफलता की प्रभाती की कहीं रेखा,
नहीं दिखता कहीं भी लक्ष्य का लघुचिन्ह, आँखों को यहाँ पर फाड़ कर देखा,
निराशा से बचा लोगे, सतत-गति-लक्ष्य-उन्मुख प्रेरणा-स्वर कह सकोगे क्या ?
मिले हो आज जीवन की डगर पर; किन्तु आगे साथ मेरा सह सकोगे क्या ?

नहीं संदेह, प्राणों का यहाँ पाथेय, साधन-हीन हो चलना असम्भव है,
नहीं संदेह, दीपक को बिना लघु स्नेह-बाती के कहीं जलना असम्भव है,
नहीं संदेह, आँधी में भयावह नाश का सामान हो पलना असम्भव है,
तुम्हारे प्यार के बल पर चला हूँ, पर, भला आगे सदय तुम रह सकोगे क्या ?
मिले हो आज जीवन की डगर पर; किन्तु आगे साथ मेरा सह सकोगे क्या ?

नहीं तो चल रहा हूँ मौन, जीवन-पंथ पर आगे अकेला ही, अकेला ही,
नहीं तो चढ़ रहा हूँ पर्वतों को आज मैं भागे अकेला ही, अकेला ही,
चला हूँ चीरता सागर-लहरियाँ बाहुओं के बल घिरी जब नाशबेला ही,
अभय वरदान देकर, मूक मन से कह सकोगे यों, 'नहीं तुम बह सकोगे' क्या ?
मिले हो आज जीवन की डगर पर; किन्तु आगे साथ मेरा सह सकोगे क्या ?



गाओ गीत

तुम कहते 'गाओ आज गीत !
है पर्व मिलन का शुभ पुनीत !'

जीवन में सुखमय लहरों का कंपन बरबस भर देते हो,
और तभी आ चुपके-चुपके उर-धन-राशि चुरा लेते हो,
खोजाते भाव उदासी के तुम दुःख भुला देते अतीत !
तुम कहते, 'गाओ आज गीत !'

तुम मधु पूरित शीतल निर्झर हो मेरी जीवन-सरिता के,
छा जाते हो प्रतिपल मेरे प्राणों के स्वर में कविता के,
मूक पराजय की बेला में मैं जाता तुमको देख जीत !
तुम कहते, 'गाओ आज गीत !'



तुम

तुम मेरे जीवन-तरु के हो कोमल-कोमल किसलय !

तुमसे मेरे यौवन की होती है पहचान प्रखर,
तुमसे मुरझाये मुख का जाता है सौंदर्य निखर,
देते मेरे जीवन का हिल-हिल मिल-मिल कर परिचय !
तुम तेरे जीवन-तरु के हो कोमल-कोमल किसलय !

आँधी पानी में, माना मैं जड़ से हिल जाता हूँ,
पर, प्रतिपल अंतरतम से गीत तुम्हारा गाता हूँ,
सतत तुम्हारे ही बल पर लड़ता रहता बन निर्भय !
तुम मेरे जीवन-तरु के हो कोमल-कोमल किसलय !



तुम्हारी माँग का कुंकुम !

उड़ रहा है आज यह कैसे तुम्हारी माँग का कुंकुम ?

बहुत ही पास से मैंने तुम्हें देखा,
न थी मुख पर कहीं उल्लास की रेखा,
न जाने क्यों रहीं केवल खड़ीं तुम पद-जड़ित गुमसुम !
उड़ रहा है आज यह कैसे तुम्हारी माँग का कुंकुम ?

मिला है जब तुम्हें यह गीतमय जीवन,
बताओ क्यों हुआ विक्षुब्ध फिर तनमन,
न जाने किस भविष्यत् के विचारों से व्यथित हो तुम !
उड़ रहा है आज यह कैसे तुम्हारी माँग का कुंकुम ?

बुझा-सा होरहा मुख-चंद्र चमकीला,
कि है प्रतिश्वास भारी, रंग-तन पीला,
न जाने आज क्यों हर वाटिका में जीर्ण-शीर्ण कुसुम !
उड़ रहा है आज यह कैसे तुम्हारी माँग का कुंकुम ?



प्रतिदान

तुम्हारे मूक निश्छल प्यार का
प्रतिदान कैसे दूं !
अनोखे इस सरल मधु-प्यार का
प्रतिदान कैसे दूं !

विश्वास था इतना –
न दुर्बल हो सकूँगा मैं,
विश्वास था इतना
न मन-बल खो थकूँगा मैं !
पर, रुका हूँ,
सोचता हूँ
एक मंजिल पर –
कि कैसे बन सकूँ मैं अंग, साथी
इस तुम्हारे मोह के संसार का !
प्रतिदान कैसे दूँ
तुम्हारे मूक निश्छल प्यार का !

स्नेह पाया था;
कहानी बन गई !
अवश निशानी बन गई !
अफ़सोस है गहरा
कि उसका गीत ही अब गा रहा हूँ,

ग्रौर ग्रपने को
विवश निरुपाय कितना पा रहा हूँ !
ग्रौर ही पथ ग्राज मेरे सामने
जिस पर निरंतर जा रहा हूँ !
सोचता हूँ –
साथ कैसे दूँ तुम्हारे राग में
जो बज रहा है ज़िन्दगी के तार का !
प्रतिदान कैसे दूँ
तुम्हारे मूक निश्छल प्यार का !

उन्माद भावुकता सभी तो
ग्राज मुझसे दूर हैं,
स्वर्णिम सुबह की रश्मियाँ सब
श्याम-घन के ग्रावरण में
बद्ध हो मजबूर हैं !
ग्रौ' युग-विरोधी ग्राँधियाँ हैं;
पर तुम्हारी याद कर
इन ग्राँधियों के बीच भी
पुरज़ोर रह-रह सोचता हूँ –
किस तरह दूँगा तुम्हें
वह ग्रंश जीवन का
मिला है जो तुम्हें
सच्चे हृदय के स्नेह के ग्रधिकार का !
प्रतिदान कैसे दूँ
तुम्हारे मूक निश्छल प्यार का !



तुम्हारी याद

बस, तुम्हारी याद मेरे साथ है !

आज यह बेहद पुरानी बात की,
ध्यान में फिर बन रही तसवीर क्यों ?
आज फिर से उस बिदा की रात-सा,
आरहा है नयन में यह नीर क्यों ?
सिर्फ़ जब उन्माद मेरे साथ है !
बस, तुम्हारी याद मेरे साथ है !

कह रही है हूक भर यह चातकी,
'प्रेम का यह पंथ है कितना कठिन,
विश्व बाधक देख पाता है नहीं,
शेष रहती भूल जाने की जलन !'
बस, यही फ़रियाद मेरे साथ है !
बस, तुम्हारी याद मेरे साथ है !

पर, तुम्हारी याद जीवन-साध की,
वह अमिट रेखा बनी सिन्दूर की,
आज जिसके सामने किंचित नहीं,
प्राण को चिंता तुम्हारे दूर की,
देखने को चाँद मेरे साथ है !
बस, तुम्हारी याद मेरे साथ है !



याद

ग्राज बरसों की पुरानी ग्रा रही है याद !

सामने जितना पुराना पेड़ है, उतनी पुरानी बात,
हो रही थी जिस दिवस ग्राकाश से रिमझिम सतत बरसात,
छिप गया था श्यामवर्णी बादलों में चाँद !
ग्राज बरसों की पुरानी ग्रा रही है याद !

तुम खड़ी छत पर, अँधेरे में सिहरकर गा रही थीं गीत,
पास ग्राया था तभी मैं भी, मिले थे स्नेह से दो मीत,
ग्राज नयनों में उसी का शेष है उन्माद !
ग्राज बरसों की पुरानी ग्रा रही है याद !



प्रतीक्षा में

प्रतीक्षा में सितारे खो गये !

बितायी थी अकेली रात जिनको गिन,
बने थे धड़कनों के जो सबल संबल,
किरन पूरब दिशा से ला रही अब दिन,
निराशा और आशा का उड़ा आँचल,
निरंतर आँसुओं की धार से
छायी गगन की कालिमा को धो गये !
प्रतीक्षा में सितारे खो गये !

नयन पथ पर बिछे निशि भर रहे जगते
सरल उर-स्नेह से जलता रहा दीपक,
जलन पूरित सभी भावी निमिष लगते,
युगों से कर रहा मन साधना अपलक,
हृदय में आ प्रिये ! उठते सतत
अच्छे-बुरे ये भाव रह-रह कर नये !
प्रतीक्षा में सितारे खो गये !

क्षितिज की ओर फैले पंथ से चल कर
कभी हँसते हुए तुम पास आओगे,
बना विश्वास, जीवन के अरे सहचर !
नहीं तुम इस तरह मुझको भुलाओगे,
पपीहे ! कह वियोगी के सभी
अब तो अभागे कल्प पूरे हो गये !
प्रतीक्षा में सितारे खो गये !



परिणाम

यह युगों की साधना का आज क्या परिणाम है ?

मैं तुम्हारे रूप का साधक,
जोहता शोभा सदा अपलक,
पर, गया मिट सुख-सबेरा, ज़िन्दगी की शाम है !
यह युगों की साधना का आज क्या परिणाम है ?

स्वप्न में तुमको बुलाया था,
कक्ष अंतर का सजाया था,
पर, युगों से स्नेह-निर्झर बह रहा अविराम है !
यह युगों की साधना का आज क्या परिणाम है ?

श्रवण आहट पर टिके मेरे,
नयन-युग पथ पर झुके मेरे,
पर, नहीं आभास तक का आज किंचित नाम है !
यह युगों की साधना का आज क्या परिणाम है ?



उन्मेष

आज मन बेचैन है !
वह कौन है
जो कर रहा अविराम आकर्षित,
अधिक चंचल
कि मारुत भी पिछड़ता जारहा है ?
कौनसे विश्वास की ज्वाला समाई है
कि जिससे हर पिरामिड – भाव अंतर के
पिघलते जारहे हैं ?
कि जिसके हेतु तूने
प्राण की सब शक्ति
सब पुरुषार्थ
निर्भय रख दिया है दाँव पर !
अन्तर, भुजा का बल,
शिराओं का धधकता रक्त निर्मल
आज आँधी बन
विफलता के सभी बादल
गगन से दूर अविरल कर
सुनहली नव – किरण
लाना यहाँ पर चाहता है !
कौनसा ज्योतित सबेरा
आज आशा की लकीरें
मन – पटल पर कर रहा अंकित ?

नवल निर्माण के हित
दे रहा जो प्रेरणा ?
यह राह–
जिस पर दृष्टि केन्द्रित
है बड़ी फैली हुई मरुथल सहारा-सी,
कि जिस पर हैं
कहीं टीले गरम जलहीन रेतीले
कहीं फैले हुए मैदान
मृग – मन को भ्रमित करते हुए,
जिन पर दिखाई दे रहे हैं
हड्डियों के ढेर
गीले शव
कि जिनकी जीभ बाहर होंठ को छू
चाटती ही रह गई है !
पर, बोल तो मन–
कौन-सा है स्वप्न ऐसा
जो जगत में कर रहे साकार ?
जिसके हित नहीं की
आज तक स्वीकार
असफलता, निराशा !



कामना

कामना मेरी !

गगन-सी बन,
विकल-सिहरन,
प्राण में रह कर समाई री नहीं पाती,
सघन नव-बादलों-सी कल्पना मेरी !
कामना मेरी !

सरल दीपक,
चमक अपलक,
वंदना के स्वर हृदय में आज तो बंदी,
सजी है पूर्ण जीवन-अर्चना मेरी !
कामना मेरी !

जलन खोई,
अमृत धोई,
जल रही अविरल अकम्पित लौ हृदय की यह,
सतत उद्देश्य-लक्षित साधना मेरी !
कामना मेरी !



वेदना

घाव पुराने पीड़ा के
जाने-ग्रनजाने में सबके
ग्राज हरे गीले सूजे !
रह-रह कर बह जाती ग्रसह्य लहर,
मानो बिजली का तीव्र करेण्ट ठहर,
मांस मौन तड़पा देता !
नाली के कीड़ों जैसा इधर-उधर
जग के सारे ग्रोर-छोर घेरे,
हृदय विदारक
नाशक
मूक ग्रभावों की
धूल भरी ग्रंधी
ग्राँधी बहती जाती !
मर्माहत यौवन चीख रहा
रोक भुजाग्रों से ग्रसफल !
ग्राज निराशा के बादल
छाये नभ में उमड़-घुमड़;
जीवन में
जन-जन मन में हलचल !
ग्राज युगों के घाव हरे !
हर उर में दुख-दर्द भरे !



अभी नहीं

अभी नहीं तूफ़ान उठा है !

कुहराम नहीं
काँपी न मही
टूटे न अभी नभ के तारे,
प्रतिद्वन्द्वी स्वर न थके हारे,
अभी नहीं जन-जन के मन में मुक्ति इष्ट का भाव जगा है !
अभी नहीं तूफ़ान उठा है !

संघर्ष अथक
नव-ज्योति चमक
फूटी न कहीं अंदर-बाहर,
किंचित उमड़ा न हृदय-सागर,
अभी नहीं नव-रवि की किरणें वसुधा पर तम विजन घना है !
अभी नहीं तूफ़ान उठा है !

सुनसान डगर
बीहड़ मर्मर
तरुवर सूखे जर्जर लुंठित,
संसृति का कण-कण अपमानित,
अभी नहीं सबके जीने का पीड़ित जग ने मंत्र सुना है !
अभी नहीं तूफ़ान उठा है !

बदले दुनिया
गुजरें सदियाँ
क्रूर दमन की, बर्बरता की,
मानव-मन की दुर्बलता की,
अभी न नव जग में माता ने नव शिशु का रुदन सुना है !
अभी नहीं तूफ़ान उठा है !



जीवन-धारा

जीवन - द्रोह अभिनव गीत
सुनकर मत बनो भयभीत !
यह आरोहमय नूतन सृजन – संगीत !
जड़वत्
शैल - गति - निर्माण जैसी रीति की
सहगामिनी - धारा
मनुजता की सृजन - शीला नहीं है !
(कौन कहता, 'व्योम यह नीला नहीं है' !)
बढ़ रहा हो ढाल पर रुक - रुक
धरा - केन्द्रीय - बल - अभिभूत
फैला ग्लेशियर गंगोत्री के पार,
करता लघु सृजन - संहार,
लघु - लघु रूप का परिणाम
जीवन - द्रोह का झरना नहीं है !
लोकरुचि मेरे समय की दिव्य है,
कोई मलिन - वदना नहीं है !
छा रही युग - भित्ति पर
जगमग अरुणिमा री !
बड़े विश्वास की
गरिमा अनोखी री !



टूटती शृंखलाएँ

क्रम

सदियों बाद

सदियों बाद हिले हैं थर - थर
सामन्ती - युग के लौह - महल,
जनबल का उगता बीज नवल;
धक्के भूकम्पी क्रुद्ध सबल !

सदियों बाद मिटा तम का नभ,
चमका नव संसृति में प्रभात,
बीती युग - युग की मृत्यु रात,
डोला मधु पूरित मलय - वात !

सदियों बाद उठी है आँधी
कर आज दिशाएँ मटमैली,
धूल क्षितिज पर अहरह फैली;
शक्ति - विरोधी पंगु अकेली !

सदियों बाद हँसी है जनता
करने नवयुग की अगवानी;
जीवन की अभिरुचि पहचानी
दफ़नाने को अश्रु - कहानी !

सदियों बाद जगा है मानव
अधिकारों की आवाज़ लगी,
सुन जग की जनता आज जगी
दुख, दैन्य, निराशा भगी-भगी !



स्वातंत्र्य - झंझावात

चल रहा है वेग से स्वातंत्र्य - झंझावात,
आज जन-जन की पुकारें-अग्नि की बरसात,
आज जनबल की दहाड़ें-मृत्यु का आघात !

दासता की शृङ्खलाएँ तोड़ देंगे आज,
घोर प्रतिद्वन्द्वी हवाएँ मोड़ देंगे आज,
निज निराशा, फूट, जड़ता छोड़ देंगे आज !

चीरती गिरि से चली है तीर-सी जो धार;
म्यान से बाहर निकल ज्यों विकल हो तलवार,
देख जिसको भीत शोषक-वर्ग-अत्याचार !

रक्त - रंजित लाल आँखें माँगतीं प्रतिशोध,
ख़ून का बदला मनुज-बल चाहता भर क्रोध,
चाहता जब नाश, कैसा आज लघु अवरोध !

झुक नहीं सकते हजारों व्यक्तियों के शीश,
झुक नहीं सकते हजारों नारियों के शीश,
झुक नहीं सकते हजारों बालकों के शीश !

रुक नहीं सकते चरण दृढ़ द्रोहियों के आज,
मिट नहीं सकते दमन की आँधियों से आज !
इन्कलाबी स्वर दबे कब साथियों के आज ?

■ ■ ■

नई दुनिया

तुम ग्राज विचारों के वल से जन रच दो दुनिया एक नई !

यह उजड़ा वेश धरा का तो,
यह ग्रहरण लगा शशि-राका तो,
ग्राँखों को लगता बुरा - बुरा,
पी ली मानो प्राचीन सुरा,
तुम ग्राज सृजन की घड़ियों में, जन रच दो दुनिया एक नई !

तम के बादल काले - काले
गरज रहे हैं बन मतवाले,
घिरती घोर ग्रँधेरी छाया
घेर रही मन को छल माया,
तुम ज्योतिर्मय नव-किरणों से, जन रच दो दुनिया एक नई !

उठता ग्राता धुग्राँ गगन से
व्याकुल मानव क्रूर दमन से,
शोषक वर्गों का बल संचित
होगा निश्चय ग्राज पराजित,
तुम ग्राश नई उर में भर कर, जन रच दो दुनिया एक नई !



संग्राम

आज जीवन की अमरता सोचना, अभिशाप है !

सामने जब नाश से उलझा हुआ संघर्ष है,
चाहना परलोक ? जब नव चेतना का हर्ष है,
पंथ पर नूतन चरण की शक्तिमय पदचाप है !
आज जीवन की अमरता सोचना, अभिशाप है !

आज नूतन का पुरातन पर विजय का नाद है,
सृष्टि नव - निर्माण अविरत साधना उन्माद है,
वज्र से फौलाद का अन्तिम प्रखर आलाप है !
आज जीवन की अमरता सोचना, अभिशाप है !

घोर झंझा के झकोरों में मरण से द्वन्द्व है !
प्राण पंछी नापता नभ, क्योंकि अब निर्बन्ध है !
वेदना - बोझिल हृदय का मिट रहा संताप है !
आज जीवन की अमरता सोचना, अभिशाप है !

बंधनों की अर्गला में बद्ध युग जीवन न हो,
भय भरी उर में मनुज के एक भी धड़कन न हो,
हो मुखर हर आदमी जो आज नत, चुपचाप है !
आज जीवन की अमरता सोचना, अभिशाप है !

बन सुदृढ़ संस्कृति सरल नव सभ्यता लो आरही,
पूर्ण युग जीवन बदलता औ' बदलती है मही,
नव लहर से विश्व का कण-कण बदलता आप है !
आज जीवन की अमरता सोचना, अभिशाप है !



पीयूष-धारा

हो गया संसार मरघट, आज कवि! पीयूष की धारा बहाओ!

हो गये सारे गगनचुंबी भवन लुंठित धरा पर ध्वस्त होकर,
आततायी, अदय, बर्बर राक्षसों के लोटते हैं शव भयंकर,
आज नव-निर्माण की दृढ़ चेतना, दृढ़ प्रेरणा प्रत्येक जन-मन में जगाओ!
हो गया संसार मरघट, आज कवि! पीयूष की धारा बहाओ!

मौन आहुतियाँ अमित, नव बीज भावी विश्व के बो मिट गई हैं,
जूझ मानव राक्षसी मति गति लहर से खो गये, दुनिया नई है,
सींच प्रतिपल स्वेद, शोणित, स्नेह से युग-भूमि को उर्वर बनाओ!
हो गया संसार मरघट, आज कवि! पीयूष की धारा बहाओ!

रुग्ण जीवन डाल, पल्लव हीन, निर्बल; सूख प्राणों का गया रस,
दृष्टि खोई-सी, मनुज की चेतना को नाश के तम ने लिया ग्रस,
जागरण का तूर्य गूँजे, प्रज्वलित जग, सूर्य-सम, रे जगमगाओ!
हो गया संसार मरघट, आज कवि! पीयूष की धारा बहाओ!

युग-चरण विजड़ित नहीं हों, शक्ति-आशा-स्वर ध्वनित तूफ़ान डोले,
कोटि हाथों से उठे नव-राष्ट्र जन-मन गर्व से जय मुक्त बोले,
रागिनी नूतन, उषा की रश्मि से अब मृत्यु की छाया हटाओ!
हो गया संसार मरघट, आज कवि! पीयूष की धारा बहाओ!



युग-विहग

शून्य नभ में युग-विहग तुम एक गति से ही उड़ोगे,
तुम उड़ोगे !

रुक नहीं सकते कभी भी पंख उठते और गिरते ही रहेंगे,
थक नहीं सकते कभी भी, राह पर आ मेघ घिरते ही रहेंगे,
विश्व को संदेश नूतन मुक्ति का दे, तुम बढ़ोगे,
तुम बढ़ोगे !

अग्नि-पथ पर, स्वस्थ मन से, आत्म संबल के सहारे और निर्भय,
पथ-प्रदर्शक, ज्ञान दीपक, नव-सृजन से, सर्वहारा वर्ग की जय,
युग-विरोधी शक्तियों को तुम चुनौती दे चढ़ोगे !
तुम चढ़ोगे !



जन-समुन्दर

अग्नि-पथ है, प्रज्वलित लपटें गगन में,
स्वार्थ, हिंसा, लोभ, शोषण, नाश रण में,
चल रहे हैं, पर, चरण युग के निरन्तर,
साँस में हुंकारते मुठभेड़ के स्वर,
युग-विरोधी शक्तियों को दे चुनौती,
हर क़दम पर, हर क़दम पर,
बढ़ रहा दृढ़ जन-समुन्दर !

ये चरण युग के चरण हैं, कब झुकेंगे !
ये शहीदों के चरण हैं, कब रुकेंगे ?
कौनसा अवरोध आहत कर सकेगा ?
पंथ पर तूफ़ान आहें भर थकेगा !
ये करेंगे विश्व नव-निर्माण बढ़कर
हर क़दम पर, हर क़दम पर,
बढ़ रहा दृढ़ जन-समुन्दर !

नाश को ललकारती है युग-जवानी,
क्रान्ति का आह्वान करती आज वाणी,
प्राण में उत्साह नूतन ताज़गी है,
युग-युगों की साधना की लौ जगी है,
सामने जिसके ठहरना है असम्भव !
हर क़दम पर, हर क़दम पर,
बढ़ रहा दृढ़ जन-समुन्दर !



मुक्ति की पुकार

बद्ध कंठ से सशक्त मुक्ति की पुकार !

धैर्य पूर्ण उर सबल
लक्ष्य ओर दृढ़ चरण
व्यर्थ नाश शस्त्र सब
व्यर्थ क्रूरता दमन
झुक सका न शीश, मिल सकी न क्षणिक हार !

अंध छा गया सघन
आज पर्व है प्रलय
राजनीति का कुहर
भर गया सहज निलय
तोड़-फोड़, सृष्टि-नाटच-ध्वस्त तार-तार !

तीव्र सिंह से गरज
मेघ से विशाल बन
चल पड़े निःशंक सब
विश्व के नवीन ज़न
लाल-लाल सब जहान का बना सिँगार !



अजेय

मुझको मिली कब हार है ?

तुम रोकते हो क्यों मुझे ?
तुम टोकते हो क्यों मुझे ?
धधका निराशा का अनल
तुम झोंकते हो क्यों मुझे ?
हैं अमर मेरे प्राण, मेरा अमर हर उद्गार है !
मुझको मिली कब हार है ?

रुकना मुझे भाता नहीं
थकना मुझे आता नहीं
सह लक्ष-लक्ष प्रहार भी
झुकना मुझे आता नहीं
प्रत्येक क्षण गतिवान जीवन, शक्ति का उद्गार है !
मुझको मिली कब हार है ?

मैं बढ़ रहा तूफ़ान में
ले क्रान्ति-ज्वाला प्राण में
वरदान मुझको मिल रहा
प्रतिपद अभय बलिदान में
नौका भँवर में हो फँसी, साहस अथक पतवार है !
मुझको मिली कब हार है ?



संक्रान्ति-काल

त्रस्त जीवन, खलबली चहुँ ओर, आहत मूक व्याकुल प्राण !

छोड़ता हूँ आज जर्जर क्षीण मृत प्राचीन संस्कृति प्यार,
चल पड़ा खण्डित धरित्री पर बसाने को नया संसार,
स्तब्धता, सुनसान, पथ वीरान, गुंजित हो नई झंकार,
आज फिर से नव सिरे से चाहता हूँ विश्व का निर्माण !

व्योम कुहराच्छन्न, गहरा तम घिरा, कम्पित धरा भयभीत,
विश्व आँगन में मचा रोदन, खड़ी है दुःख की दृढ़ भीत,
राह जीवन की विषम है, हो रहीं जग-नाश की सब रीत,
सूर्य-किरणों से खुलें सब द्वार, जीवन-हर्ष हो उत्थान !

सभ्यता कल्याणमय, सुखमय, नवल निर्मित सबल हो नींव,
एकता आधार पर जग के खड़े हों, जी सकें सब जीव,
ध्वस्त पूँजीवाद तानाशाह—भू नासूर फोड़े पीव,
शक्ति ऐसी चाहता जिससे जगत को दे सकूँ वरदान !

रूढ़ियों की जटिल जकड़ी लौह कड़ियाँ झनझना कर तोड़,
अंध सब विश्वास, घेरे सर्प से मन को, निमिष में छोड़,
सभ्यता की डाल पर पटकी कुल्हाड़ी आज दूँगा मोड़,
टूटती गिरती दिवारों पर, लगे फिर गूँजने मधु गान !

शक्ति का संग्राम, सागर में उठा उन्मत्त दर्दम ज्वार,
तीव्र गति से टूट द्वीपी-तट प्रखर बढ़तीं अनेकों धार,

शक्ति जन-जन की लगी है आज किंचित मिल न सकती हार,
कौन कुचलेगा जगत में सर्वहारा वर्ग का अभिमान !

ध्येय है आगे, चरण पथ पर बढ़ेंगे, है न कोई रोक,
स्वत्व का, अधिकार का संघर्ष झंझा-सा न कोई टोक,
क्रांति की जलती-भभकती अग्नि में जब तन दिया है झोंक,
है न कोई मोह-ममता का, प्रलोभन का कहीं सामान !

जग बदलता है, जगत का हर मनुज बदले बिना अवरोध,
मानवोचित सभ्यता में हो रहे प्रतिपल निरंतर शोध,
साधना दृढ़ शांत संयम से बँधी, थोथा नहीं है क्रोध,
मिल रहे जन-राष्ट्र, शोषण लूट भक्षक-नीति का अवसान !



पाषाण-उर

आज मानव का हृदय तो बन गया पाषाण !
खून से विचलित नहीं होते तनिक भी प्राण !
जल गया है अग्नि में मधु स्नेह,
रिक्त अंतिम बूँद, जर्जर देह,
गिर रहा दुख के घनों से मेह,
टूट कर ढहता सुरक्षित गेह,
कष्ट कंटक आपदाओं में फँसी है जान !
आज मानव का हृदय तो बन गया पाषाण !

बढ़ रही है विश्व-भक्षक प्यास,
पी चुका इतना कि अटकी साँस,
है नहीं कोमल अधर पर हास,
क्रूरता, हिंसा, नहीं विश्वास,
कर्णभेदी गारहा फूहड़ घृणा का गान !
आज मानव का हृदय तो बन गया पाषाण !

उड़ रही मरुथल सरीखी धूल,
साथ उड़ते टूट सूखे फूल,
आश-तरु उखड़े सभी आमूल,
डूब जल में सब गये हैं कूल,
नाश का ज्वालामुखी फूटा, कहाँ निर्माण ?
आज मानव का हृदय तो बन गया पाषाण !



मानवी-व्यापार

मानवी-व्यापार कितनी दूर !

दूर जन-जन से सहज उमड़ा हुआ मधु प्यार,
दूर जन-जन से सरल, सुख, शांति का संसार,
होरहा है पीड़ितों का आत्म-गौरव चूर !
मानवी-व्यापार कितनी दूर !

चाहता मानव कि भर लूँ स्वर्ण-निधि से कोष,
कर रहा अभियान निर्भय, है नहीं संतोष,
दानवी-बल नाश-हिंसा-भावना भरपूर !
मानवी-व्यापार कितनी दूर !

नाज़ियों सा काफ़िला बन कर रहा प्रस्थान,
सत्य-शिव-सुन्दर जलाने, सर्वनाशक गान,
देखते बरबाद करने के घृणित ग्रह घूर !
मानवी-व्यापार कितनी दूर !

आततायी शक्ति का सूरज कहाँ है अस्त ?
आज ज्वाला-ग्रस्त दुर्बल वर्ग जग का त्रस्त,
आज तो पथ-भ्रष्ट मानव हिंस्र खूनी क्रूर !
मानवी-व्यापार कितनी दूर !



अभियान के बाद

गूंजते रह-रह करुण-स्वर

रक्त की नदियाँ बहा कर
दिग-दिगन्तों को हिला कर
थम गये निर्मम बवंडर,
आज जन-जन के व्यथित उर !
मुक्त युग-खग के दमित पर !
गूंजते रह-रह करुण स्वर !

होम वैभव कर, निरन्तर
नृत्य दानव का भयंकर
होचुका मानव अवनि पर
नाश हिंसा से चकित हर !
विश्व में मानों जड़ित डर !
गूंजते रह-रह करुण स्वर !



प्रलय

उजड़ा पड़ा सारा नगर,
सूनी पड़ी सारी डगर,
चिड़ियाँ तृषित सहमी खड़ीं,
कुटियाँ सकल टूटी पड़ीं,
छाई अवनि आकाश में दहशत !

आ सनसनाता है पवन,
क्रोधित प्रखर धधकी जलन,
ज्वाला ग्रसित अगणित सदन,
उर्वर हुआ, सूखा विजन,
दृढ़ उच्च दुख का बन गया पर्वत !

कण-कण गया भू का सिहर,
उर में बही भय की लहर,
हिंसक बढ़े जब घिर अमित,
क्रन्दन, मरण जन-जन दमित,
दुर्बल जगत सारा हुआ आहत !



इंकलाब

त्रस्त सदियों के घृणित इतिहास पर छा
क्रांति की लपटें धधकती हैं भयंकर,
रुद्ध प्राणों के दमन से बन्द थे पट
टूट कर गिरते अवनि पर डगमगा कर !

'न्याय' के स्वर पर दबी थी विश्व जन-जन
की करुण दुख से भरी वाणी सताई,
वह कहीं से राह पाकर फूट निकली
है व्यथा से चूर्ण—रक्षा की दुहाई !

फूट निकली हैं उमड़ती एक के
उपरान्त सरिताएँ विजन खोई हुई-सी,
फूट निकला है कि लावा गर्म भीषण,
गर्भ-भू से, विषमता धोई हुई-सी !

आज जीवन मुक्ति का आह्वान आया
सुप्त जगती के कणों में चेतना है,
धमनियों में रक्त का संचार अविरल
वज्र-सा बल वेग, अभिनव प्रेरणा है !

शक्तियाँ नूतन जगत-निर्माण करने
बढ़ रहीं नव-सभ्यता-आदर्श पर हैं,
विश्व के कल्याण के साक्षी बनेंगे
द्रोह जीवन-भावना-संगीत-स्वर हैं !

ग्राँधियाँ काली क्षितिज पर उड़ रही हैं,
जीर्णता प्राचीन मिटती जा रही है,
हो रहे कोंपल नये विकसित ग्रवनि पर,
सृष्टि नूतन वेष प्रतिपल पा रही है !

देश ग्रौर समाज की क्षय नीतियाँ मिट
नव सरल शासन व्यवस्था बन रही है,
लूट-शोषण की प्रथा को छोड़कर ग्रब
एक नूतन भव्य दुनिया बन रही है !

भव्य दुनिया वह कि जिसमें रह सकेंगे
सम दुखों में, सम सुखों में, वर्ग सारे,
भव्य दुनिया वह कि जिसमें रह सकेंगे
विश्व-मानव एक-सा ही रूप धारे !



संबल

प्रगति ही ध्येय जीवन का, बना संबल !

गहन जीवन समुन्दर में रहीं प्रति बार उठ-गिर वेग से लहरें
बना सुख-दुख किनारे ज़िन्दगी बहती सरल दृढ़ बन बिना ठहरे,
उउड़ते ज्वार के सम्मुख तनिक भी प्राण मानव के नहीं सिहरे,
जटिलता राह की कब कर सकी दुर्बल !
प्रगति ही ध्येय जीवन का, बना संबल !

झुका कब शीश मानव का, निमिष भर, पत्थरों की चोट से पीड़ित
हुआ कब धैर्य जीवन में सबल युग-प्राण का किंचित कहीं विगलित
प्रहारों से हुआ देदीप्य मुख, बढ़ती गई तन कांति हो ज्योतित
सतत युग-साधना-व्रत चल रहा अविरल !
प्रगति ही ध्येय जीवन का, बना संबल !

हिमालय-सी सुदृढ़तम दीर्घ बाधाएँ खड़ी हैं राह में अड़कर,
बरसते व्योम से शोले धधकते लाल, धू-धू जल रहा हर घर,
गिरा देना कठिन पथ पर हवाएँ चाहतीं बहकर प्रखर सर-सर,
चरण पर बढ़ रहे हैं ज्वाल में जल-जल !
प्रगति ही ध्येय जीवन का, बना संबल !

बनी तूफ़ान-स्वर साथिन अमर यौवन भरी ललकार यह मेरी,
डोलती है वायु में उन्मुक्त-जीवन-चेतना-तलवार यह मेरी,
हिला देगी सुदृढ़ पर्वत-शिला-अन्याय की, हुंकार यह मेरी,
हृदय में आग नवयुग की मची हलचल !
प्रगति ही ध्येय जीवन का, बना संबल !



नई रचना

नवीन ज्योति की किरण
सुदूर व्योम से
सघन युगीन अंधकार
छिन्न-भिन्न कर
उतर रही मिटा निशा
चमक उठी दिशा-दिशा !

नवीन मेघ की झड़ी
सुदूर व्योम से बरस पड़ी
नहा गया नगर
नहा गई गली-गली
बहा गई सभी पुराण जीर्णता सड़ी गली !

बरस रही नये विचार की झड़ी
नहा रहा मनुष्य विश्व का,
विकास-पंथ द्वार पर
खड़ा मनुष्य विश्व का
कि खिल रहे समाज में नवीन फूल
सृष्टि ने बदल लिए दुकूल !

नव सुगंध से भरी हवा
सुदूर व्योम से

अशेष वेग ले
नवीन लोक के रहस्य को बता गई !
अथक प्रयत्न शक्ति दे गई !
उभर रहा समाज का नवीन शृंग !
बन रहा नया विधान
जन प्रधान
ध्वंस सृष्टि
संग-संग !



गाड़ता हुआ

हो रहा है दुंदुभी का घोष द्वार-द्वार पर
हिल रही है सुप्त कब्र-कब्र नव-पुकार पर !

पूर्व रूप पर नवीन शक्ति जैतवार है,
दर्प की शिला तड़क रही, नया प्रहार है !

ज़िन्दगी ने कर दिये दलित सशक्त कटघरे,
भूमि पर गिरा दिये कुलाधि पात्र विष भरे !

तारतम्य रोशनी सदृश अटूट चल रहा,
दाघ-दाभना से मिट रहा विपक्ष बल महा !

आफ़तों के बादलों का झुक गया है गर्व सिर,
और गर्जनों का है दहाड़ता हुआ विलीन स्वर !

आरहा है युग नया-नया लथाड़ता हुआ !
दुश्मनों की मौत कर जघन्य गाड़ता हुआ !



शहीदों का गीत

यह शहीदों का अमर पथ रोकना इसको असम्भव !
मेटना इसको असम्भव !

चल रहे जिस पर युगों से दृढ़ चरण शत-शत निरन्तर,
एक धुन है, स्फूर्तिमय क्रम, गान में ले प्रलय का स्वर,
मध्य की अठखेलियाँ तूफ़ान झंझावात अगणित
ये थके कब, ये रुके कब, ये झुके कब प्राण के हित ?
चल रहे अविराम गति से रोकना इनको असम्भव !
यह शहीदों का अमर पथ मेटना इसको असम्भव !

रोक सकते राह के कंटक नहीं, रोड़े नहीं, भय,
तिमिर भी क्या कर सकेगा, होचुका पथ पूर्व-परिचय,
श्रृंखलाएँ बंधनों की तोड़ने ये बढ़ रहे हैं,
स्वत्व के संग्राम में औ' मुक्त होने लड़ रहे हैं,
ये अमर बन मिट रहे हैं रोकना इनको असम्भव !
यह शहीदों का अमर पथ मेटना इसको असम्भव !

वेदना शत-शत, मरण-दुख, अश्रु, ममता प्यार, क्रन्दन,
कर नहीं सकते विकम्पित मोह के अविराम साधन,
दण्ड, अत्याचार, पशुबल, नाश के हथियार भीषण,
कर सकेंगे मुक्ति-पथ से क्या विपथ ? जब है सुदृढ़ मन,
हो चुकी भीषण परीक्षा रोकना इनको असम्भव !
यह शहीदों का अमर पथ मेटना इसको असम्भव !

विश्व के कल्याण की शुभ-भावना साकार करने,
मुक्त जीवन की प्रखरता को बसा, दुख क्लेश हरने,
ये जगे जब-जब जगत में न्याय के स्वर को दबाया,
ये रहे बस मौन जब-तक ज़ोर शोषण ने न पाया,
शक्तिमय हुंकार इनकी रोकना जिसको असम्भव !
यह शहीदों का अमर पथ मेटना इसको असम्भव !



मुझे है याद

मुझे है याद तेरा क्रूर पागल रूप हत्यारा,
वहायी थी जमीं पर बेरहम जब रक्त की धारा,
जलाये गाँव थे पूरे उजाड़ीं बस्तियाँ अगणित,
मुझे है याद ज़ुल्मों का दमन इतिहास वह सारा !

नयन जिनने कि तेरी दानवी तसवीर देखी है,
हृदय जिसने असह घुटती हुई वह पीर देखी है,
कभी क्या भूल सकतीं हैं दुखी आहे गरीबों की,
कि जिनने मूक मिटने की सदा तक़दीर देखी है !

बग़ावत के गगन में मुक्त हो झण्डे उठाये हैं,
शहीदी शान से जिनने अभय हो सिर कटाये हैं,
चरण जिनके सदा गतिशील आगे ही उठे दुर्दम,
सतत संघर्ष में हर बार जिनने घर लुटाये हैं !

जलन की आग जो धधकी हृदय रह-रह जलाती है,
कहानी सिसकियाँ-आँसू भरी निर्मम सताती है,
चुनौती आज देता है सबल पुरुषार्थ यह मेरा,
कि साँसें हर घड़ी तूफ़ान के धक्के बुलाती हैं !

कि तेरे राज में हमने जवानी को मिटाया है,
ठिठुरते नग्न बच्चों को सदा भूखा सुलाया है,
सुनहले भव्य-जीवन-स्वप्न की दुनिया बनाने की,
हमारी कामना को धूल में तूने मिलाया है !

जला देगी नयन के आँसुओं से फूटती ज्वाला,
सभी बंधन विषमता के, अबुझ प्रतिशोध की हाला,
हमारी धमनियों में रक्त की नूतन भरी लहरें,
प्रहारों से मिटेगा वर्ग शोषक क्रूर मतवाला !



कला

जो सुदूर स्वप्न-राज्य की विहारिका
व्योम पार देश की रही निहारिका
कर्म-मार्ग हीन, स्वर्ण-विश्व साधिका
द्वन्द्व से विमुख, सदा नवीन बाधिका
हेय व्यर्थ युग-उपेक्षिता अमर-कला !

धूल से विलग विचार वास्तविक नहीं,
झूठ शब्द-जाल चित्र मात्र है वही,
जो मनुष्य भाव-राग से जुड़ा न हो
दर्द-हास तार से सहज बुना न हो
कब समाज में टिका ? कहाँ अरे चला ?

व्यक्त सिर्फ आज के सवाल चाहिए
तम नहीं प्रभात लाल-लाल चाहिए
व्यक्ति की करुण कराह है उतारनी
आग जो दवी उसे पुनः उभारनी
सब कुरीतियाँ मिटें, प्रहार ज़लज़ला !

भावना निराश ना मृतक समान हो
अश्रु औ' रुदन नहीं, न मोह गान हो,
आज जीर्ण देह तोड़ता मजूर है—
पर, समानता समय बहुत न दूर है,
कवि मुखर करो! य' किसलिये कला, भला ?



मंज़िल कहाँ

है अभी मंज़िल कहाँ ?

चल रहा हूँ राह पर अभिनव लिये विश्वास
लक्ष्य का मिलता कहीं किंचित नहीं आभास
द्रोपदी के चीर-सा यह बढ़ रहा है पथ
इति कहाँ ? बीता नहीं दुर्गम अभी तक अथ
छोर क्या ? आँचल कहाँ ?

रात के घनघोर तम में हिल रहे हैं पेड़,
भूत सी लगती विजन में मृत्तिका की मेड़
विश्व को उल्लू भयंकर शाप लाया है
रात रानी कोप का क्षण पास आया है
स्नेह के बादल कहाँ ?

जूझना है, जो खड़ी हैं सामने चट्टान
और करना है नये युग का सबल निर्माण
दूर जाना है, अथक साहस चरण के बल
ज्योति-अंतर की जगाकर वेग से अविरल
चाँद का संबल कहाँ ?



जिन्दगी की शाम

यह उदासी से भरी
मजबूर, बोझिल
ज़िन्दगी की शाम !
अपमानित
दुखी, बेचैन युग-उर की
तड़पती ज़िन्दगी की शाम।

मटमैला, तिमिर-आच्छन्न, धूमिल
नीलवर्णी क्षितिज पर
आहत, करुण, घायल, शिथिल
टूटे हुए कुछ पक्षियों के पंख
प्रतिपल फड़फड़ाते !
नापते सीमा गगन की दूर
जिनका होगया तन चूर !

धुँधला चाँद
शोभा हीन
कुछ सकुचा हुआ-सा झाँकता है,
होगया मुखड़ा
धरा को देख कर फीका,
सफ़ेदी से गया बीता,
कि आलोक से रीता !
गया रुक एक क्षण को

राह में सिर धुन पवन
सम्मुख धरा पर देख
जर्जर फूस की कुटियाँ
पड़ीं जो तोड़ती-सी दम,
घिरा जिनमें युगों का सघन-तम !
और जिनमें
हाँफ़ती-सी, टूटती-सी,
साँस का साथी पड़ा है
हड्डियों का ढेर-सा मानव,
बना शव !
मौनता जिसकी अखंडित,
धड़कता दुर्बल हृदय
अन्याय अत्याचार के
अगणित प्रहारों से दमित !
अभिशाप ज्वाला का जला,
निर्मम व्यथा से जो दला
जिसको सदा मृत-नाश का
परिचय मिला !
जो दुर्दशा का पात्र,
भागी, कटु हलाहल घूँट जीवन का
मरण-अभिसार का
निर्जन भयानक पंथ का राही
थका, प्यासा, बुभुक्षित !

कह रहा है सृष्टि का कण-कण
'मनुजता का पतन !'
असहाय हो निरुपाय

मानवता गिरी !
अवसाद के काले घने
अवसान को देते निमन्त्रण
बादलों में मनु-मनुजता आ घिरी !
उद्यत हुआ मानव
बिना संकोच, जोंकों-सा बना,
मानव-रुधिर का पान करने !
क्रूरतम तसवीर है,
है क्रूरतम जिसकी हँसी
विष की बुझी !

पर,
दब सकी क्या मुक्त मानवता ?
सजग जीवन सबल ?
यह दानवी-पंजा
अभी पल में झुकेगा,
और मुड़कर टूट जायेगा !
मनुजता क्रुद्ध हो
जब उठ खड़ी होगी
दबा देगी गला
चाहे बना हो तेज़ छुरियों से !
सबल हुंकार से उसकी
सजग हो डोल जाएगी धरा,
जिस पर बना है
भव्य वैभव पूर्ण
इकतरफ़ा महल
(पर, क्षीण, जर्जर और मरणोन्मुख !)

अभी लुंठित दिखेगा,
और हर पत्थर चटख कर
ध्वंस, बर्बरता, विषमता की
कथा युग को सुनाएगा !
जलियानवाला-बाग-से
मृत आत्माओं की
धरा पर लोटती है आबरू फिर;
क्योंकि गोली से भयंकर
फाड़ डाले हैं चरण
दृढ़ स्वाभिमानी शीश
उन्नत माथ !
जिन पर छा गई
सर्वस्व के उत्सर्ग की
अद्भुत शहीदी आग,
उसमें भस्म होगा
ध्वस्त होगा राज्य तेरा
ज़ुल्म का, अन्याय का पर्याय !

पर, यह ज़िन्दगी की शाम
अगणित अश्रु-मुक्ताओं भरी,
मानों कि जग-मुख पर
गये छा ओस के कण !
चाहिए दिनकर
कि जो आकर सुखादे
पोंछ ले सारे अवनि के
प्यार से आँसू सजल।
जिससे खिले भू त्रस्त

जीवन की चमक लेकर,
चमक ऐसी कि जिससे
प्रज्वलित हों सब दिशायें,
जागरण हो,
जन-समुन्दर हर्ष लहरों से
सिहर कर गा उठे
अभिनव प्रभाती गान,
वेदों की ऋचाओं के सदृश !
बज उठे
युग-मन-मधुर वीणा
जिसे सुन जग उठें
सोई हुई जन-आत्माएँ !
और कवि का गीत
जीवन-कर्म की दृढ प्रेरणा दे !
प्राण को नव-शक्ति
नूतन चेतना दे !



जब-जब

जब-जब बढ़ीं क्रुद्ध लहरें गरजती हुईं
तब-तब चलायी थी नौका,
समुन्दर चकित था !

जब-जब गिरीं बिजलियाँ ये लरजती हुईं
तब-तब बढ़ाये क़दम दृढ़,
निलय भी नमित था !



विश्वास है !

विश्वास है–
एक दिन काली घटाओं से घिरा आकाश
खुल कर ही रहेगा !
धूप के दिन
एक क्या अगणित
धरा पर ज्योति में डूबी
सरल उजली हँसी हँसते हुए आकर रहेंगे !
तुम रुको मत
इस बरसते कल्प में जीवन-प्रवासी,
भीग जाने का कहीं भय रोक ले गति को न !
तुम इतना करो विश्वास–
आगे लाल-किरणें राह में बिखरी मिलेंगी !
सूख जायेगा सभी जल
आज जो प्रति अंग को कंपित किये है,
हार जायेगा
सतत गतिवान धारा से
विरोधी मेघ
जो जल-कण अमित संचित किये हैं।

तम भरी गहरी घटाओं के तले
है टिमटिमाता दीप
मानव के अमर विश्वास का !

पर, जो अँधेरे की सघनता में
कहीं खो-सा गया है;
ढूँढ़ उसको तुम
जलाओ दीप अपना
एक से अगणित जलेंगे दीप जगमग !
जो तमिस्रा भंगकर
नव स्वर्ण-पथ-रचना करेंगे !
क्योंकि
भावी विश्व के विश्वास की
लौ जल रही है !

इसलिये विश्वास है—
छाई हुई संध्या समय संक्रांति की
धूमिल अँधेरी पार कर
नव लाल जीवन का सवेरा
व्योम से लाकर रहेगी !

▪ ▪ ▪

मन

मोर-सा मन
फूल-सा तन
उल्लसित पुलकित सरल
हो स्नेहमय
मदमत्त सुख की पा हिलोरें
तप्त-अन्तर-उष्णाता भंगी बयारें
हो उठा चंचल
कि देखे जब गगन में
कृष्णवर्णी घोर 'निम्वस' मेघ
सविता की प्रखरतम रश्मियों को ढँक लिया,
मानों विजन मरुथल सहारा से
उठी है धूल
आँधी रेत की
छूने गगन की सरहदें !

उत्कर्ष !
मेरी हड्डियों का, खून का
लघु पॉव भर के बोझ का
कुछ फड़फड़ाती नस लिये
अंतर उठा रे
हर्ष से उल्लास से हिल-डोल !
मानो बर्फ़ से—

कोई हिमालय के शिखर पर,
बद्ध शीतल झील सुन्दर
फट पड़ी हो,
खिल पड़ी हो
दूध-सी !

■ ■ ■

कौन से सपने

कौन-से सपने
लगे अपने
निरन्तर
साधना साकार करने जो
हृदय तन से लगे तपने
अरे मन, बोल तो रे
कौन-से सपने ?
भर रहे हैं शक्ति ऐसी–
दे रही जो प्रेरणा, गति, चेतना
घन फट रहे
औ' उड़ रही है वेदना !
उल्लास की अविरल उमंगें
उर-समुन्दर की तरंगें
उठ रही हैं, गिर रही हैं
और मुखड़े पर
नई ही आज रेखायें दिखाई दे रही हैं !
कौन-सा सुख-भाव वर है
सुघर, सुन्दर, अमर जो श्रेष्ठतर है
हो गया हलका कि जिससे बोझ जीवन का
युगों की कामना का चित्र भी रंगीन
अन्तर-दाह शीतल लीन !



जीवन-दीप

ग्रँधेरा है, ग्रँधेरा है
कि चारों ग्रोर जीवन में
निविड़तम का वसेरा है !
कि जिसने सब दिशाग्रों को
कुटिल भय पाश में भर मौन घेरा है !
दिखाई कुछ नहीं देता
पलक की नाव मेरी लय
सघन-तम-सिन्धु में !
देखा क्षितिज में दूर तक
पर, कुछ न सूझा
ग्रौर भी गहरा उमड़कर तम
धुग्राँ सा बन
कड़कते बादलों-सा छा
हृदय में कर उठा चीत्कार
छल, रंगीन यह संसार
धोखा है कि धोखा है !
सनातन
प्राण का ग्रंतिम बसेरा ही ग्रँधेरा है !
विवश हो काँपता मन, काँपता जीवन
जटिल हो बढ़ रही उलझन
ग्रँधेरा है, ग्रँधेरा है !

पर, बह रहा
ग्रविराम जीवन-स्रोत

अनदेखा किये तम सामने
जिसमें छिपी हैं
सर्वभक्षक यातनाएँ घोर
संशय औ' अधूरा ज्ञान ले
चारों ओर !
पर, वह रहा
जीवन सबल झरना;
कि किंचित सोचना रुकना
बुरा होगा यहाँ वरना,
निमिष भर को थकित होकर
अँधेरे से चकित होकर
अशिव के सामने झुकना
बुरा होगा यहाँ वरना !
ज़रा भी ठोकरों से हिल
अवनि पर एक पल झुकना
गिरा देगा !
तुम्हारी बाहुओं का बल
अथक संबल
शिथिल होकर
भयावह काल के सम्मुख
अँधेरे में सदा को
लुप्त हो मिट जायेगा !
मात्र जीवन-शक्ति
अंतर-चेतना से
रह सकेगा मौन दृढ़ निष्कंप
फैले इस अँधेरे में,
तुम्हारी साधना का दीप,
वांछित कामना का दीप !



रात का आलम

ठंडी हो रही है रात !
धीमी
यंत्र की आवाज़
रह-रह गूँजती अज्ञात !
स्तब्धता को चीर देती है
कभी सीटी कहीं से दूर इंजन की,
कहीं मच्छर तड़प भन-भन
अनोखा शोर करते हैं,
कभी चूहे निकल कर
दौड़ने की होड़ करते हैं,
घड़ी घण्टे बजाती है
कि बाक़ी रुक गये सब काम
स्थिर, गतिहीन, जड़, निस्पन्द
खोकर चेतना—बेहोश
साँसें ले रही हैं जान
हो अनजान !

ऊँघते मज़दूर, पहरेदार, श्रमजीवी
नशे में नींद के ऐसे—
कि मानों संगिनी रह-रह बुलाती
कर सतत संकेत
होने बाँह में आबद्ध

मन से, देह से
चुपचाप एकाकार लय होने
शिथिल !
स्वप्न से फिर जाग
अपने पर हँसी
आ खेल जाती है !
कि ऐसी भूल भी कैसी
सदा जो भूल जाती है !

न सीमा है कहीं
बेजोड़ है सारी अनोखी बात
पर, है सत्य
ठंडी हो रही है रात
भारी हो रही अविराम
धुल कर चाँदनी से वात
ऊपर बन रही है ओस
धुँधली पड़ रही है रात

यह री कल खुलेगा
रेशमी पट
मुग्ध प्रकृति-वधू का गात !

■ ■ ■

सुनहरी आभा

छिपा चाँद काले उमड़ते घनों में
उठी प्रबल झंझा लहरते बनों में
गरजता गगन है
हहरता पवन है
कि कितनी भयानक अँधेरी-घनेरी अकेली निशा है
कि कितनी भयानक हमारे विजन-पंथ की हर दिशा है
हमें पर उसे भी सरलतम समझकर
बितानी सबल बन व हँसकर निरन्तर

नहीं है समय स्वप्न को हम निहारें
नहीं है समय रूप को हम सँवारें
नहीं है समय जो कहीं पर रुकें हम
नहीं है समय साँस ही ले सकें हम
निरन्तर प्रगति ध्येय होगा हमारा
पहुँचना जहाँ श्रेय होगा हमारा
सबेरा तभी प्रेय होगा हमारा !

उषा की चमकती हुई
लाल किरणें मिलेंगी
नई ज्योति ऐसी
कि हिल-हिल सरल नेह कलियाँ खिलेंगी
व जीवन हमारा बदलता चलेगा
समुन्दर हृदय का लहरता चलेगा

कि ग्राभा सुनहरी
नई सृष्टि सारी
हमें फिर प्रकृति
नव दमकती दिखेगी
सुखद भाव सुन्दर
चमकती दिखेगी

■ ■ ■

ज़िन्दगी

ज़िन्दगी
एक ढर्रे की बनी,
हर घड़ी अभिशापिनी
सदियों सी बड़ी किस काम की
जब नहीं है सनसनी ?
एक रस औ' एक स्वर
गूँजता प्रत्येक घर
बोझ से जीवन हुआ भारी
क्या यही है युक्त तैयारी ?
कि धारा राह में ठहरी
व छायी भूत-सी
इस छोर से उस छोर तक
सुनसान-सी बीहड़ उदासी मौत की गहरी;
कि फैली है हृदय में रे
सड़ी सी लाश की बदबू
कि गन्दगी ऐसी
कि सारी ज़िन्दगी दूभर !
रुक गई थक कर
नहीं है आज की यह ज़िन्दगी
इन्सान की अपनी सगी
छिः, यह ज़िन्दगी !



शिशिर भंजन

शीतऋतु
तलवार की कटु धार-सा चलता पवन !
निर्जन गगन में घन कहीं कड़का,
कहीं पर काँपती करका
सघन तम
बरसता है मेह
दल-दल राह में
चंचल बड़े जलस्रोत
सारे खेत हैं जल-मग्न
कुटियाँ भग्न-खंडित
थरथराता वायुमण्डल
विश्व प्रांगण मध्य हलचल
गाय, बकरी, भैंस, पशु,
जन, वृद्ध, शिशु, रोगी तरुण
भू तरल पर
पेट में घुटने गड़ाये
सिहरते
केश भूतों से बिखेरे
वेष भिक्षुक-सा बनाये
काटते भीषण अभावों की
करुण युग-रात्रि क्षण-क्षण,

सह रहे वर्बर नरक-सम यातनायें
दु:ख दाहक पा कभी रोते
कृशित-तन नग्न मरणासन्न शिशु
तब विश्व की
दुर्गन्ध सारी गन्दगी से युक्त
आँचल को उठाकर
शुष्क स्तन पर नारियाँ
शोषण करातीं खून का !
है क्या यही विद्रोह की स्थिति ?
भर गया अब कष्ट के दुर्दम पवन से
क्रूरता अन्याय का वैलून !
निश्चय
पास है विस्फोट का क्षण
दे रहा प्रतिपल
यही संकेत !
आवाहन जगत् में क्रांति का अब
हो रहा मुखरित निरंतर;
चल पड़ी है दूर से आँधी भयंकर
जन विजय की कामना भर !
बेड़ियाँ परतन्त्रता की
और कड़ियाँ हर तरह की
झनझनाती टूटने को
हर दमित अब छूटने को
दे रहा दृढ़ स्वर सुनाई
मुक्त नवयुग के प्रखर संदेश का !
है प्रतिचरण अब क्रान्ति-पथ पर

नव सृजन की नींव का मजबूत पत्थर
चल रहा क्रम
भ्रम न किंचित
गिर रहा आकाश से हिम !
आरहा देता निमन्त्रण
शीत का सन्-सन् प्रभञ्जन !



नया विश्वास

बर्फ़ की इन ग्राँधियों में
ग्राश की चिनगारियाँ कब तक जलेंगी ?
चिनगारियाँ :
जिन पर रहीं बिछ
राख की परतें जलीं !
रे ग्रौर कब तक
उर-सुलगती ज्वाल जीवन की रहेगी ?
काँपती रवि-रश्मियाँ नभ से चलीं
ग्रति शीत लहरों से रही घिर रात जीवन की घनी !
रात जो बढ़ती गई प्रतिपल
सती उस द्रौपदी के चीर-सी;
बात ठण्डी है सभी हिम-नीर-सी !
विश्वास पीले पत्र-सा
रे झुक गया है हार कर,
ग्रब ग्रौर कब तक व्योम की छत
प्राण की रक्षा करेगी ?
ग्रोट ग्राँचल की कहाँ तक
मत्त तूफ़ानी घड़ी में
दीप ग्रन्तर का बचाये रह सकेगी ?
बुझ न जाये
क्योंकि बाक़ी है ग्रभी तो स्नेह,
क्या वह स्नेह यों ही व्यर्थ जायेगा ?
नहीं !
ग्रविरल जलेगा वह प्रलय तक;

ग्रौर ग्रंतिम बूँद तक,
हर श्वास तक,
जग उलझनों में !
दीप जीवन का प्रखर
हर क्षरण
रखेगा ज्योति में डूबा हुग्रा !
चिनगारियाँ हैं :
बर्फ़ से, हिम-नीर से
ये बुझ न पायेंगी कभी
ग्राँधियों से तो जलेंगी ग्रौर
ऊँची बन
गगन में तीव्र लपटों-सी !
न सोचो
दीप यह यों ही बुझेगा !
यह न सोचो
थक गया है ज्वार सागर का उमड़ता;
देख लेना
कल उठेगा बाँधने को व्योम को फिर
क्योंकि मेरी बाहुग्रों में
शक्ति बनती ग्रौर बढ़ती जा रही है,
क्योंकि ग्रन्तर-बल
सतत ग्राती हुई हर साँस पर बेचैन है !
रह-रह नया विश्वास जीवन में
उभरता जारहा है !
बर्फ़ की इन ग्राँधियों में
ग्रादमी बेखौफ़ सरगम गा रहा है !



चाह

मेरी भावनाओं की अगर तसवीर बन जाये
तो खुशहाल; उजड़े विश्व की तक़दीर बन जाये !

फूलों से मुहब्बत की, बहुत चाहा खिले उपवन
पर, पतझर-विजन की धूल में आया कहाँ जीवन ?

मंगल कल्पनाओं में ग्रहण धुँधला समाया जो
नूतन धारणाओं पर पुराना जंग छाया जो !

कर अवरुद्ध मेरी ज़िन्दगी की राह, बन पत्थर
काले रंग जैसा दूर सूने व्योम में भर-भर

मुझको रोक, जाने क्या नयन में घोल देता है
'हो सरहद्द में मेरी'— कभी यह बोल लेता है !

अभिनव रोशनी का सनसनाता तीर आजाये
तो युग-वेदना में हर्ष सुख का नीर आजाये !

मेरी भावनाओं की अगर तसवीर बन जाये
तो खुशहाल, उजड़े विश्व की तक़दीर बन जाये !



धूल-श्री

सौंफ़िया हरी-हरी
डाल-डाल ग्राज री भरी !

हज़ार लाख बेशुमार
हिल रहीं कतार पर कतार
पा पवन दुलार-प्यार
सन-सनन उठी पुकार
भर नया उभार
री उतर रही सरल युवा परी !
सौंफ़िया हरी हरी
डाल-डाल ग्राज री भरी !

मंद रंग लाल-लाल
व्योम की विशाल गाल पर गुलाल
ग्राज रस भरी डँगाल
है किये सिँगार
देखभाल कर सँवार पत्र-जाल
री सुहावनी हरीत चूनरी !
सौंफ़िया हरी-हरी
डाल-डाल ग्राज री भरी !



मेरे हिन्द की संतान

मेरे हिन्द की संतान !
तेरे नेत्र हों द्युतिमान
तेरे मुक्त, बल से युक्त, विद्युत् से चरण गतिमान !
मेरे हिन्द की संतान !

भूखी नग्न शोषित त्रस्त
तेरी भग्न जर्जर देह नत
प्राचीनता के डगमगाते जीर्ण चरणों पर,
कि हालत आज है बेहद बुरी
मानो कसाई की छुरी से चोट खा
बेचैन हो चिल्ला उठा बकरा
दमित सब सर्वहारा वर्ग कितना हो गया गज़रा !
करोड़ों मूक श्रमजीवी
उठो, प्रतिशोध लो
नूतन सबेरे में
तुम्हारे देश के
उन्मुक्त विस्तृत वायुमंडल में
नई किरणें
लगीं गिरने !
कि मुट्ठी बाँध कर गाओ
नया स्वाधीनता का गान !
मेरे हिन्द की संतान !

धूल-श्री

सौंफ़िया हरी-हरी
डाल-डाल आज री भरी !

हज़ार लाख बेशुमार
हिल रहीं कतार पर कतार
पा पवन दुलार-प्यार
सन-सनन उठी पुकार
भर नया उभार
री उतर रही सरल युवा परी !
सौंफ़िया हरी हरी
डाल-डाल आज री भरी !

मंद रंग लाल-लाल
व्योम की विशाल गाल पर गुलाल
आज रस भरी डँगाल
है किये सिँगार
देखभाल कर सँवार पत्र-जाल
री सुहावनी हरीत चूनरी !
सौंफ़िया हरी-हरी
डाल-डाल आज री भरी !



मेरे हिन्द की संतान

मेरे हिन्द की संतान !
तेरे नेत्र हों द्युतिमान
तेरे मुक्त, बल से युक्त, विद्युत् से चरण गतिमान !
मेरे हिन्द की संतान !

भूखी नग्न शोषित त्रस्त
तेरी भग्न जर्जर देह नत
प्राचीनता के डगमगाते जीर्ण चरणों पर,
कि हालत ग्राज है बेहद बुरी
मानो कसाई की छुरी से चोट खा
बेचैन हो चिल्ला उठा बकरा
दमित सब सर्वहारा वर्ग कितना हो गया गज़रा !
करोड़ों मूक श्रमजीवी
उठो, प्रतिशोध लो
नूतन सबेरे में
तुम्हारे देश के
उन्मुक्त विस्तृत वायुमंडल में
नई किरणें
लगीं गिरने !
कि मुट्ठी बाँध कर गाग्रो
नया स्वाधीनता का गान !
मेरे हिन्द की संतान !

हर सोया हुआ इन्सान
करवट ले उठा, जागा,
कि जिसको आततायी देख
उलटे पैर ले भागा !
जगे हैं सिंह निद्रा से
मिटा पापी अँधेरा अब
'ठहर जा ओ अरे हिंसक !
कुचलता हूँ अभी मैं शीश यह तेरा,
कि बस अब डालदो घेरा !'
सभी ने यों पुकारा है !
करोड़ों के चरण फौलाद-से
अन्याय की चट्टान से जूझे,
किसी को आज क्या सूझे ?
असत् सत् का
चमक तम का
हुआ अभियान
खड़ी हो जा
गठीली स्वस्थ फैली मुक्त छाती तान !
मेरे हिन्द की संतान !



स्नेह की वर्षा

मेरे स्नेह की वर्षा !
नहा लो
त्रस्त प्राणों के उबलते ज्वार,
करलो शान्त जीवन के
धधकते लाल सब अंगार !
मेरे स्नेह की वर्षा !

घुमड़ कर हिन्द-सागर से
सजल बादल
घिरे नभ के किनारों तक,
बढ़े शीतल पवन के साथ
करने शक्ति भर दृढ़ वार
ऊँचे दुःख से निर्मित
हिमालय से बने पर्वत !
अभागे देश के ऊपर
कि मूसलधार जल वर्षा
नहा लो
त्रस्त प्राणों के उबलते ज्वार,
मेरे स्नेह की वर्षा !

उठी हैं अग्नि की लपटें प्रखर
है सिन्धु-गङ्गा भूमि उर्वर
बंग श्यामल कुन्तला धरणी

झुलस आहत
गगन से याचना कर आज
जीवन माँगती है
नाश-सीमा पर खड़ी होकर !
तुम्हारे विन्दु दो केवल
हिला शव को जगा देंगे !
वरस लो आज
देकर पूर्ण अपने स्नेह-कण निर्मल
सजल, कोमल !
सरल अनुराग की वर्षा !
कि मूसलधार जल वर्षा !
नहा लो
आज जीवन के
मलिन सब भाव धो डालो !

युगों से त्रस्त
पीड़ा ग्रस्त
मेरे देश के मानव
सहे तुमने
अनेकों युग दमन के
वेदना, निर्मम जलन के,
आग में झोंके गये
तृण से जले,
अपमान क्या
सब लूट कर भी ले गये
कटु आततायी क्रूर,
हँसते व्यंग्य से हो दूर !

जिनने कर दिया है
देश की प्रत्येक जर्जर झोंपड़ी का
चोट से प्रति अंग चकनाचूर !
मेरे स्नेह की वर्षा,
नहा लो
त्रस्त प्राणों के उबलते ज्वार !
मेरे प्यार की वर्षा,
मेरे स्नेह की वर्षा !

■ ■ ■

जन-रव

आलोकित विस्तृत जन पथ !
खड़े हुए विद्युत् गतिमय
युग के जिस पर नूतन रथ !
प्रस्तुत,
शक्ति सुसज्जित !
मन्वन्तर कर
नव संस्कृति निर्मिति हित
प्रेरक स्वर
उन्मुक्त प्रखर अविजित,
गूँज रहा जन-रव
जन पथ पर जन-रव

मानव
दुर्दम इस्पाती अडिग सबल
चरणों के बल
क़दम-क़दम पर
दे नव-आवाहन
चीर रहा छाये
उच्छृङ्खल अर्थ-व्यवस्था के घन !
उपचार समाजी घावों का कर
परिवर्तित
आनन्दित वसुधा को कर

सुख-सम्पन्न सभी
धन-अन्न समस्त जनों को दे,
करने प्रतिपादित
नई सभ्यता, दर्शन अभिनव
जनयुग का संयमित सबल जन-रव !

पहली बार

विश्व के इतिहास में जनता सबल बन
आज पहली बार जागी है,
कि पहली बार बाग़ी है !

पुरानी लीक से हटकर
बड़ी मज़बूत चट्टानी रुकावट का
प्रबलतम धार से कर सामना डटकर
विरल निर्जन कँटीली भूमि पथरीली
विलग कर, पार कर
जन-धार उतरी
मानवी जीवन धरातल कर
सहज अनुभूति अंतस-प्रेरणा बल पर !

कि पहली बार छाई हैं
लताएँ रंग-बिरंगी ये
कि जिनकी डालियों पर
देश की संकीर्ण रेखाएँ
सभी तो आज धुँधली हैं !

क्योंकि
अन्तर में सभी के एक से ही दर्द की
व्याकुल दहकती लाल चिनगारी
नवीना सृष्टि रचने की प्रलयकारी !

क़दम की एकता यह आज पहली है
तभी तो हर विरोधी चोट सहली है !

गुज़र गये हैं
हहरते क्रुद्ध भीषण अग्नि के तूफ़ान
जिनका था नहीं अनुमान
सभी के स्वत्व के संघर्ष में युग-व्यस्त
भावी वर्ष-सम साधक
भुवन प्रत्येक जन-अधिकार का रक्षक !

केलीफ़ोर्निया की मृत्यु-घाटी से,
कलाहारी, सहारा, हब्स, टुण्ड्रा से
मिटी अज्ञान की गहरी निशा,
ज्योतित नये आलोक से रे हर दिशा !
निर्माण हित उन्मुख जगत जनता
विविध रूपा
विविध समुदाय
बैठा अब नहीं निरुपाय
उसको मिल गया
सुख स्वर्ग का नव मंत्र
मुक्त स्वतंत्र !

उसका विश्व सारा आज अपना है
नहीं उसके लिए कोई पराया, दूर सपना है !

युगान्तर पूर्व युग-जीवन विसर्जन
दृढ़ अटल विश्वास के सम्मुख सभी
अन्याय पोषित भावनाओं का

हुआ अविलम्ब निर्वासन
बुझते दीप फिर से आज जलते हैं,
कि युग के स्नेह को पाकर
लहर कर मुक्त बलते हैं !
सघन जीवन-निशा विद्युत् लिये
मानों अँधेरे में बटोही जारहा हो टॉर्च ले
जब-जब करें डगमग चरण
तब-तब करे जगमग
उभरता लोक-जीवन मग !

कलमष नष्ट,
पथ से भ्रष्ट !

दूर कर आतंक
नहीं हो नृप न कोई रंक !
अभी तक जो रहे युग-युग उपेक्षित वे
सँभल कर सुन रहे विद्रोह की ललकार
पहली बार है संसार का इतना बड़ा विस्तार,
कि पहली बार इतनी आज कुर्बानी अपार !



बदलता युग

क्रम



गिर नहीं सकती

गिर नहीं सकती कभी विश्वास की दीवार !
निर्मित तप्त जन-जन के लहू से,
वज्र-सी, फौलाद-सी दृढ़ हड्डियों से,
नींव के नीचे पड़े
कातर अनेकों मूक जन-बलिदान !
यह विश्वास जीवन के नये भवितव्य का
धुँधला नहीं निस्सार !
गिर नहीं सकती कभी अगणित प्रहारों से
नए विश्वास की दीवार !
वर्षों बाद की निविड़ान्धकार सुरंग
जन चेतना की शक्ति से द्रुतपार,
ज्योतिर्मय हुआ संसार,
धधका सत्य का अंगार
लोहे-सी खड़ी जन-शक्ति की दीवार !
त्रस्त-शोषित-सर्वहारा-वर्ग रक्षा के लिए
अपना उठाये सिर
चुनौती दे रही उसको–
सतत साम्राज्य-लिप्सा-रक्त-नद में
वर्ग जो डूबा हुआ।
वह गिर नहीं सकती कभी
जन-संगठित-बल की नई दीवार !
टकरा लौट जाएगी विरोधी धार !
बारम्बार लुंठित, खा करारी हार !



मिटाते चलो

सदियों के बन्धन मिटाते चलो तुम,
तम के ये परदे हटाते चलो तुम,
अवरुद्ध राहों के पत्थर सभी ये
निर्झर सदृश सब उड़ाते चलो तुम।

विष दासता का पिलाया गया जो,
शोषण का कोल्हू चलाया गया जो,
असफल सभी नीति ऐसी करो—
जिससे उठे सिर, दवाया गया जो।

जन-युग समर्थक, प्रजातंत्र का बल
शत-शत स्वरों से यह गुंजित हो प्रतिपल,
जनपद जगे ले विजय की मशालें
श्रम से अभावों के फट जायँ बादल।



कुर्बानियाँ

विश्व के परतन्त्र देशों की
जटिल दृढ़ शृंखलाएँ टूटने को
आज झन-झन बज रही हैं !
आज प्रतिक्षण रण,
अमित कुर्बानियाँ स्वातन्त्र्य-हित
प्रतिपल मचल कर हो रही हैं !
सिर्फ़ मरघट में चिताएँ हैं शहीदों की,
नहीं ज्वाला बुझी,
धू-धू भयंकर और भीषण
हो रही है, जल रही है,
बढ़ रही है !
यह उमड़ता ज्वार जनता का
कहीं पर रुक सका है ?
स्वर—
अवनि-गिरते हुए तारक सरीखा,
क्या किसी भी घोर रव से दब सका है ?
युद्ध की आवाज़,
एटम-बॉम्ब का है नाम,
पर ललकार,
इण्डोनेशिया छोड़ो,
भगो, बर्मा व हिंदुस्तान छोड़ो !
एशिया क्या—

विश्व के लघु राष्ट्र सारे,
एक बिगड़े सिंह जैसे जग उठे हैं !
एक घायल साँप जैसे
फन उठाये दीखते हैं !
अन्त है फासिज़्म का,
औ' नष्ट होने जारही हैं
विश्व की साम्राज्यवादी शक्तियाँ !
शोषण दमन का चक्र
जो अगणित युगों से चल रहा था,
आँख मींचे
फेक्टरी के बॉयलर में
कोयले के स्थान पर
श्रमजीवियों के, शोषितों के,
पद-दलित नत नीग्रों के
प्राण झोंके जारहे थे
स्वार्थ-लोलुप-देश निर्दय !
आज वे सब
फड़फड़ा कर उठ रहे हैं !
घृणित दुखदाई हुकूमत को
पलटने उठ रहे हैं !
जो खड़े इनके शवों पर
तुच्छ रजकण से गए बीते समझकर
और बन कर बेरहम
करते रहे मर्दित पदों से,
लड़खड़ा कर गिर रहे हैं
एक करवट से !
उठे अब धूल से औ' रक्त से रंजित

चाहते अधिकार,
आज़ादी, व्यवस्था;
पतित मानव की प्रगति का चित्र सुन्दर
रूप अभिनव !
साम्य का संगीत गूँजे,
रोक बन कर जो खड़े हैं
आज तूफ़ानी प्रबल आघात,
विप्लव ज्वाल,
प्रतिपल दृढ़ हथौड़े से
निरन्तर चोट खाकर,
एक पल में बुद्बुदों से,
आह भर मिट जायेंगे !
ध्रुव सत्य—
जनता की विजय !
संक्रान्ति के जो इन क्षणों में
छारही जड़ता, निराशा
वह नहीं वातावरण होगा,
प्रगति की आश का दुर्दम प्रभंजन
विश्व के पीड़ित उरों में
दौड़ जायेगा प्रखर बन !



तूफ़ान

समय संक्रान्ति का,
असफल निराशा का,
अधूरे स्वप्न ले मानव,
अधीर अशान्ति में प्रतिपल
विकल साँसें, दमन के दिन
रहे हैं गिन, रहे हैं गिन !
मिटा समुदाय सारा खा गया है ज़ंग,
दीमक और फोड़ों से
हुआ जर्जर, हुआ जर्जर !
बिगड़ दोनों गये हैं 'लंग्स'।
हिंसक और भक्षक व्यक्ति का भीषण,
शुरू अब होगया है नाच, नंगा नाच !
जिसके पैर के नीचे मनुजता का दबा है वक्ष,
क्रन्दन की पुकारें और आहें
बन रहीं तबले-मजीरों की घमक,
निर्दय कुचलता जा रहा है आज !
पैरों से मसलता जारहा है आज !
दोनों हाथ जो अपने
डुबोकर रक्त में होली मनाये,
क्रूर भूतों सी हँसी हँसता
ज़मी पर वार कर हर बार
निर्मम बन गिराता है रुधिर की धार !

सारा लाल है संसार,
सारा चीखता संसार,
रो-रो आह भरकर आज !

देखो बढ़ रहा तूफान !
करने विश्व को आज़ाद,
देने को नया जीवन,
बसाने साम्य की दुनिया
मिटाने दुःख की घड़ियाँ
युगों की सख़्त काली लौह की कड़ियाँ
बजीं झन-झन, बजीं झन-झन
हुईं सब ग्रन्थियाँ ढीली, खुले बन्धन !
कि बोला अब नया इन्सान—
'जनता राज ज़िन्दाबाद,
जनता को मिले अधिकार !'
सारे विश्व में स्वातन्त्र्य-झंझावात
बहता तोड़ता प्राचीन-चिन्तन बाँध,
राजा, काल्पनिक भगवान, डिक्टेटर
हुकूमत के ज़माने के कफ़न पर
कील अन्तिम ठुक चुकी है आज !
जीवन जागरण के गान के स्वर
विश्व के प्रत्येक कोने से
सुनाई दे रहे हैं आज !
आया मुक्ति का तूफ़ान !
पूरे हो रहे अरमान !
अभिनन्दन !!
प्रगति की शक्तियाँ सारी तुम्हारे साथ !
दुर्दम मुक्ति का तूफ़ान !
निश्चय जीत का वरदान !
बढ़ता आरहा तूफ़ान !



बंगाल का अकाल

बंग भू पर हो रहा क्रंदन-मरण व्याकुल स्वरों में !

घुल रहे हैं किस तरह विद्रोह रोके चिर-बुभुक्षित,
होश में हैं मौन मुर्दे आज रोते क्यों मरण हित ?
वृंतच्युत कोमल तड़पते भूख से शिशु-प्राण-अम्बुज,
पेट के ख़ातिर यहाँ सर्वस्व नारी बेचती निज,
और हैज़ा दीखता है आज कितने ही नगर में,
हैं बिछी अगणित कतारें हाय लाशों की डगर में,
तड़पते अरमान इनके रोटियों की चाह में ही,
सो गये हैं जो सदा को एक व्याकुल आह में ही,
कौन देखे ? कौन रोये ? सड़ रहे मानव घरों में !
बंग भू पर हो रहा क्रन्दन-मरण व्याकुल स्वरों में !

कह रहा जग आज सारा,–'न्याय क्या, अन्याय है,
आज का शासन कहाँ असहाय है, निरुपाय है ?'
ओ मरण के अस्थिपंजर आज बल अपना दिखादो,
घोर विप्लव ही मचादो आज सागर को हिलादो,
मौन हैं उच्छ्वास कह दो आज उनसे, 'पुनः जागो !'
छीन लो अधिकार अपने दीन बन कर कुछ न माँगो,
क्रूर अत्याचार जग के साम्य के पथ से हटादो,
तोड़ युग के पूर्ण बंधन क्रांति की ज्वाला जलादो,
रूप ऐसा ओ प्रवर्तक ! आज हो लपटें करों में !
बंग भू पर हो रहा क्रन्दन-मरण व्याकुल स्वरों में !

मंदिरों ने, मसज़िदों ने क्या किसी को भी बचाया ?
सांत्वनामय धैर्य इनका क्या किसी के काम आया ?
धर्म के पोथे करोड़ों सड़ रहे हैं नालियों में,
आज चाँदी के न टुकड़े हैं प्रसादी थालियों में,
ईश पर विश्वास कैसा ? कौन ले अवतार आया ?
ढोंग मंदिर, ढोंग मसज़िद, भूल यह–'गुरण गा न पाया,
भाग्य का लेखा ? नहीं, वह था यही केवल बहाना
लूटना था, चूसना था, या हमें उल्लू बनाना
हाय ! मानव अधमरे ही बह रहे हैं निर्झरों में !
बंग भू पर हो रहा क्रन्दन-मरण व्याकुल स्वरों में !

हो रहा है नृत्य पथ पर, हो रहा रोदन कहीं पर,
बन रहे सुख-दुख भयंकर, मूक है जीवन यहीं पर,
कह उठेगी मूर्ख दुनिया–'विश्व का ही यह नियम है,
भाग्य में इनके लिखा था, ईश की लीला विषम है।'
भूल है जो कह रहे यह, स्वार्थ का संसार उनका,
चल रहा है यह युगों से खोखला व्यापार उनका,
आज अन्तिम दृश्य देखो नाट्य घर बंगाल में आ,
जाग विप्लव, जाग नवयुग अस्थि के कंकाल में आ,
आज धड़कन, आज कंपन हो बुभुक्षित के उरों में !
बंग भू पर हो रहा क्रन्दन-मरण व्याकुल स्वरों में !



नौ-सैनिक विद्रोह

मचली हिन्द-सागर में सबल विद्रोह की लहरें,
हिन्दुस्तान को छूने चली आतीं बिना ठहरे !

जब बंगाल की खाड़ी, अरब सागर हिले डोले,
सदियों के दमित सीने नया दृढ़ जोश पा बोले !

लेंगे छीन आज़ादी कि हममें शक्ति है इतनी,
लो प्रतिशोध युग-युग का कि ज़ुल्मों की कथा कितनी !

नौ-सैनिक चले मिलकर जहाज़ों को उड़ाने को,
भीषण गोलियाँ बरसीं गुलामी को मिटाने को !

'गोरे' आततायी सब छिपे डर कर सभी भागे,
दुश्मन कौन था जो आ सका बढ़ कर वहाँ आगे !

जन-जन मुक्ति-आन्दोलन मशालें जल उठीं अगणित,
पशु-बल जा छिपा उल्लू सरीखा बन भयातंकित !

नव आलोक से सारी दिशाएँ दमदमायी थीं,
नूतन चेतना से सब दिवारें डगमगायी थीं !

धक्का शक्तिशाली जब लगा जन-तन्त्र का नारा,
सागर पार सिंहासन गया हिल राज्य का सारा !

सड़कों पर पड़े अगणित क़दम फौलाद से दुर्दम,
जाग्रत देश के जन-जन अथक लड़ते रहे हरदम !

कीं कुर्बानियाँ तुमने, उठायीं आँधियाँ भीषण,
जिससे कट गये जकड़े गुलामी के सभी बन्धन !

लपटें जल उठीं दुगनी पड़ा जब-जब दमन-पानी,
औ' प्रतिरोध भी दुगना बढ़ा, की खूब मनमानी !

यह साम्राज्यवादी गढ़ विकल हो बौखलाया था,
जिसने शक्ति का कण-कण कुचलने में लगाया था !

लेकिन बुझ न पाई जो वतन ने आग सुलगाई,
बरसों की बढ़ी जिसमें पुरानी जुड़ गई खाई !

■ ■ ■

जय हिन्द

हिन्द फौज का स्वतन्त्र वीर
गिरि, समुद्र, वन विशाल चीर,
मृत्यु-द्वार-सा मिला समीर,
आफ़तें कठिन, चरण रुके न
पंथ पर, सदा बढ़े प्रवीण !

मुक्त राष्ट्र का सप्राण गीत,
जागरण प्रकाश में अतीत,
पर्व है महान् यह पुनीत,
हिन्द की विजय सही, जहान-
रूप बन चला स्वयं नवीन !



साम्प्रदायिक दंगे

नगर-नगर व गाँव-गाँव में, दहक रही यह आग है,
डगर-डगर व पाँव-पाँव पर, भभक रही यह आग है!
कि आसमान चीरती हुई, विनाश की हवा चली,
हुआ अधीर, लाल-लाल बन जहान, सृष्टि सब जली,
कराहती व चीखती सनी हुई यह रक्त से गली-गली,
मनुज विवेक हीन, हिंस्र, हो गया कठोर, जंगली!
कि खून आँख में, कटार का कटार से जवाब है,
कि बस, यहाँ स्वच्छन्द मज़हबी गँवार ही नवाब है!
न दीखती कहीं मनुष्य में ज़रा समीप लाज भी,
वही लिए कराल आदि जानवर शरीर आज भी!
असभ्य मद-प्रमत्त डोलती हैं हिंसकों की टोलियाँ,
सुलग रहीं असंख्य बेक़सूर व्यक्तियों की होलियाँ!
जलन के दर्द से कराहती औ' काँपती वसुन्धरा,
कि आज एक बार फिर जगी चँगेज़ की परम्परा!
कि आज एक बार फिर उखड़ रहे हैं बेशुमार घर,
कि आज एक बार फिर दिलों में छा रहा निरीह डर!
उतर रहे हैं मौत घाट लाख-लाख बालकों के सर,
कि खा रही पछाड़ विश्व माँ लुटी हुई सिहर-सिहर!
मनुष्य रोष चित्र यह भयावना है किस क़दर,
कि धर्म जाति गत प्रभाव का ज़हर उगल रहा ग़दर!
स्वदेश छोड़, अश्रु साथ ले ये चल पड़े हैं काफ़िले,
अनेक रोग ग्रस्त त्रस्त हैं, अनेक अध-जले!

कि रोकलो शहीद बन तमाम औरतों की आबरू,
महात्मा, पटेल, शेख, राष्ट्र कर्णधार नेहरू!
रुको प्रगति, विकास और राष्ट्रीयता के दुश्मनो!
गुलाम वृत्ति अब नहीं, रुको स्वतन्त्रता के दुश्मनो!
तुम्हें क़सम है चाँद की, तुम्हें कसम है पाकतम क़ुरान की,
तुम्हें क़सम ज़मीन की, तुम्हें क़सम है आसमान की!
मदद करो निरीह की, उठो न क्योंकि कर्बला के वीर हो,
अरब महान देश के बहादुरो उठो कि तुम अमीर हो!
शिवा-प्रताप की परम्परा के पुत्र तुम बदल गये,
महानता के स्वप्न को लिए हुए कहाँ फिसल गये?
तुम्हीं वतन की शान को गिरा रहे, मिटा रहे,
कि हिन्द की उदार भावना स्वयं घटा रहे,
कि मेल से रहो, यही करीम और श्याम की पुकार है,
कि एक हिन्द हो यही रहीम और राम की पुकार है!



आज़ाद मस्तक को उठा लेता

लूट हिंसा का मनुज पर जब नशा छाया
रूप ले हैवान का मज़हब उतर आया,
रक्त की इंसान की यदि प्यास बुझ जाती
ख़त्म होजाती बनी नेतागिरी माया !

इसलिए विद्वेष का झण्डा उठाया है,
क़त्ल करने का घृणित नारा लगाया है,
मतलबी साम्राज्यवादी चंद लोगों ने
देश को मेरे कसाई घर बनाया है !

आग की लपटें गगन में घिर घहरती हैं,
जल रहे गृह, रूह जन-जन की सिहरती है,
मौत की आवाज़ मनहूसी समाई है,
भूमि पर सरिता हलाहल की लहरती है !

आज तो गुमराह पागल झुंड मदमाते,
शस्त्र ले फरसे छुरे हिंसक चले आते,
दृश्य भीषण नाश का बर्बर मचाते जो
गीत, पर, अल्लाह या हनुमान का गाते !

मिट गये सब वृद्ध, नारी, शिशु व रोगी तक
शर्म है, जो छीन जीने का लिया है हक़,
आततायी शक्ति ने हा क्रूर निर्दय बन
स्वार्थ के हित में मिटाये शांति के साधक !

भग्न, औ' वीरान कर डाले अनेकों घर,
यन्त्रणा निष्ठुर रुँधे हैं आज भय से स्वर !

जल रहे धू-धू नगर सब ग्राम जीवित जन
चाहिए उजड़े हुम्रों को त्राण का ग्रवसर !

क्या पता था देश का यह भाग्य ग्रायेगा !
दूर हो ग्रंग्रेज़ बैठा मुसकरायेगा !
काट डालेंगे गले, लड़ ग्राज ग्रापस में !
हिंद की ग्रौलाद को यह रूप भायेगा !!

ग्राँधियाँ बंगाल के नभ में उठी थीं जब,
रोक लेना था मगध प्रतिशोध का विप्लव !
फिर न पड़ती देखनी पंजाब की पशुता
ग्रौर ये सीमान्त के निर्दोष मानव-शव !

ग्राज सड़कों पर खड़ी है मौत की दहशत,
नग्न भूखी राह में जनता पड़ी ग्राहत,
क्षीण जर्जर त्रस्त दुर्बल उन्मना व्याकुल,
ग्रात्म-गौरव, ग्रात्म-वैभव नष्ट है ग्रानत !

व्योम में उठती मुसीबत की किरण चमकी,
रक्त की छाया दिशाएँ लाल हो दमकीं !
फैसला है ग्राज क़िस्मत की ग्रनेकों का
ज्वाल बढ़ती जारही है, जो नहीं कम की !

सृष्टि का संघर्ष क्षण प्रत्येक धड़कन का
स्नेह पावन से मिटा दो शेष मद रण का,
हो चुका नरमेध मानवता जगो गाम्रो !
मुक्ति का संगीत, ग्राशा गीत जीवन का !

ग्राज तो बेचैन ग्रस्तव्यस्त है तन-मन
यह न होनी बात नाशक देख ग्रायोजन !
गर्व से ग्राज़ाद मस्तक को उठा लेता,
लड़ गया होता विषमता से कहीं जीवन !



हम एक ह

तूने कर दिया बरबाद
मेरे देश का वैभव
कि मेरे देश का गौरव !
मुझे है याद–
मेरी भूमि पर बहता कभी था
नीर-सा घी-दूध,
जैसे आज बहता
युद्ध के मैदान में पेट्रोल अथवा ख़ून !
जन-जन तृप्त थे
निश्चित
जीवन में सुखी !
पर, आज
तूने कर दिया मुहताज,
भूखों मार !
दुख, आतंक, गोलों और तोपों का
भरा भंडार !
लड़ते देश के बालक
झगड़ गोबर सरीखी चीज़ के ऊपर,
घृणित !
तूने जमाया पैर माँ के वक्ष पर,
जिसके करोड़ों लाल
हिन्दू और मुस्लिम को लड़ाया,

फूट का बो बीज,
भू-सम्पत्ति का विक्रय !
नया भावी मनुज,
जब नीति तेरी याद किंचित भी करेगा तो–
उबलकर क्रोध से अपने,
भरे प्रतिशोध ज्वाला,
दाँत लेगा पीस !
अपने बाप-दादों की
मरण-सी बेबसी पर,
अश्रु की धारा बहाकर
तोड़ देगा गर्व सब !
पर, आज तो ये आँख मेरी
देखतीं वह दृश्य–
जीवन में
कभी भी स्वप्न तक में
जो न सकता सोच !
क्या मिट सभ्यता सारी गई ?
वर्षों हमारी साधना का, एकता का प्रयत्न,
सब साहित्य का वरदान,
मिट्टी हो गया ?
होना असम्भव है !
रुकेगी यह नहीं आवाज़–
'सब इंसान जग के एक हैं !
हम एक हैं !'



विवशता में

विवशता की असह उन मूक घड़ियों में
गगन को चीरती आएँ
तुम्हारे प्यार की किरणें !
कि फिर युग-युग पिपासित होंठ पर जग के
बहें मधु स्नेह के झरने !
मनुजता के पतन-निर्मित
अँधेरे के समय-पट पर,
गगन को चीरती आएँ
तुम्हारे प्यार की किरणें !
बहा ले जा घृणा के तृण,
अरी झेलम, अरी गंगा !
क्षितिज से उठ रहीं लपटें,
महा बर्बर विनाशी आपसी दंगा,
लुटेरा है खड़ा नंगा !
कि काले मेघ आओ तुम
कि काले मेघ छाओ तुम,
बरस लो आज झर-झर-झर,
कड़क कर आततायी के
हृदय में आज भरदो डर,
गिरा करका,
ढहादो सब अशिव के गढ़ !
अरे ओ ! त्राण के दुर्दम चरण, उठ-चढ़ !

फिसलनी इन बड़ी ऊँची दिवारों पर,
समूची शक्ति के बल पर,
कि तेरे दृढ़ प्रहारों से
लगें ढहने, सभी दीवार ये गिरने !
गगन को चीरती आएँ
तभी निर्देश पथ को दूर से करती हुई किरणें !
तभी बाहें उठें तेरी
सभी पीड़ित उरों को गोद में भरने !
सदियाँ बीत जाएँगी,
कि नदियाँ सूख जाएँगी,
धरा यह डूब जाएगी,
नयी धरती उभर कर शीघ्र आएगी,
मगर विश्वास है इतना—
विरासत में मिलेगी यह
तुम्हारी भूमि की संस्कृति,
इसे केवल न जानो इति ।
उठो ऐसा न हो मानव
भविष्यत् थूक दे तुम पर,
बनो मत मूक
पशुता के चरण पर
नत नहीं हो शीश !
यह आशीष
दोनों ने दिया है—
शाप ने, वर ने ।
गगन को चीरती आएँ
तुम्हारे प्यार की किरणें



मलान सावधान

मिटी नहीं अभी मनुष्य की पशुत्व-वृत्ति,
ले रहा अशान्त श्वास जंगली हृदय मलान
रंग-भेद के बुझे हुये चिराग़ पर !
गये नहीं अभी समाज से विचार–
रक्त-पान के,
अपार लूट के, खसोट के,
'सुवर्ण' की विनष्ट शान के
मनुष्य के मनुष्य पर प्रहार मौत के !
असभ्य दासता प्रथा बनी रहे,
'सुवर्ण' चाह
आज भी बना रही सवेग योजना
गले पुकार कर रहे
अशक्त सृष्टि-स्वप्न घोषणा दहाड़ !
ले विनाश शस्त्र-बल शरण,
सहस्र राक्षसी चरण
विषाक्त साथ में घृणा-पवन,
अनीति ढोल
बन्द कर श्रवण
प्रमादवश बजा रहा, बजा रहा !
गुलाम विश्व के मिटे हुए असार चिन्ह फिर बना रहा !
ज़मीन पर न,
आसमान में क़िले बड़े-बड़े असीम कर रहा सृजन !

उबल रहा मलान का प्रखर सुधार श्वेत रक्त,
गॉड का महान भक्त,
गौर-वर्ण जाति का नवीन दूत
यह ग़लत कि वह मनुष्य बीच भूत !
अजेय शक्ति उठ रही,
नवीन ज़िंदगी मचल रही,
विनाश का धुआँ
बिखर-बिखर अनन्त में समा रहा,
विरोध-मेघ व्योम घेर कर लहर रहे,
मनुष्यता उतर रही,
नए समाज का विधान हो रहा !
बड़ा कठिन लकीर पीटना
वही पुराण जाति-भेद, रंग-भेद की !
मलान सावधान !

■ ■ ■

अफ़सोस है !

अफ़सोस है, अफ़सोस है !

उजड़ा हुआ संसार है,
रोदन यहाँ हर द्वार है,
बिगड़ा हुआ, पीड़ित, दुखी, मिटता हुआ समुदाय है !
अफ़सोस है, अफ़सोस है !

भीषण क्षुधा की ज्वाल है,
सूखी जगत की डाल है,
अम्बर अवनि में गूँजता बस एक ही स्वर 'हाय है' !
अफ़सोस है, अफ़सोस है !

नीरस मनुज का गान है,
झूठा लिए अभिमान है,
गतिहीन जीवन है जटिल, असहाय है, निरुपाय है !
अफ़सोस है, अफ़सोस है !

■ ■ ■

विरोधी शक्तियाँ

घेर रहा है जग को प्रतिपल, उठता जड़ता का काला तम,
बढ़ता जाता है जीवन में अतिशय क्रन्दन, अतिशय विभ्रम,
छाते जाते अविरल नभ में काले, भयग्रस्त, अमा-से घन,
मति खो, अनियन्त्रित आज बना निष्प्राणित, अपमानित जीवन !

रोक रहा है कौन उठाकर, आज भुजा से जन का इंजन ?
गति प्रेरक पहियों में, अवनति हित कौन रहा है भर उलझन ?
बर्फ़ीली आँधी में जीवित मानव धधका सेक रहा है–
कौन दिवाकर दीपित मुख पर परदा ढँकते फेंक रहा है ?

किन पापों की रात क्षितिज से, पथभ्रष्टा बन उतर रही है,
डाकन-सी प्रतिमा लेकर, नव युग की झोली कतर रही है,
कौन विरोधी-धारा, फैली बस्ती पर आ दौड़ रही है,
कौन विरोधी-धारा, नूतन दीवारों को तोड़ रही है ?

किसने इस क्षण आभा को कर म्लान, अंधेरे से मन जोड़ा,
अक्षय संचय जिससे रह-रह कर होता जाता है थोड़ा !
जूझो ! युग के सजग पथिक तुम, थक जाने का अवसर न अरे,
रे नाविक ! विधि सोचो ऐसी, जिससे युग-नौका आज तरे !



सोओो नहीं

सोओो नहीं, सोओो नहीं !

यह रात है दुख से भरी,
इस रात डूबेगी तरी,
तुम बाहुओं में शक्ति भर कर जागते निशि भर रहो !
इंसान हो तो भीत जीवन में कभी
होओो नहीं, होओो नहीं !
सोओो नहीं, सोओो नहीं !

यह रात है काली बड़ी,
पथ पर भयानकता जड़ी,
तुम ज्वाल हाथों में लिए आवाज़ यह करते रहो –
अवसर प्रलय संगर प्रबल रे भूलकर
खोओो नहीं, खोओो नहीं !
सोओो नहीं, सोओो नहीं !



स्थितियाँ और द्वन्द्व

निश्चिन्त भी, भयभीत भी !

यह ज़िन्दगी जब दाँव पर,
संघर्ष है प्रति पाँव पर,
नव भैरवी भी वज रही,
रुकना न सम्भव है कहीं,
है हार भी औ, जीत भी !
निश्चिन्त भी, भयभीत भी !

हम सुन रहे हैं राग सब,
अनुराग और विराग सब,
कोई बुलाता – लौट आ,
कोई सजाता कह 'विदा' !
रोदन करुण भी, गीत भी !
निश्चिन्त भी, भयभीत भी !

शिव में अशिव आभास भी,
छलना जहाँ– विश्वास भी,
अभिशाप भी वरदान है,
मिट्टी निरीह महान है !
अपवित्र और पुनीत भी !
निश्चिन्त भी, भयभीत भी !

ललकारता है कौन यह ?
पुचकारता है कौन यह ?
मानव विरोधी द्वन्द्व में
मानव सदा आनन्द में !
यह शत्रु भी है मीत भी !
निश्चिन्त भी, भयभीत भी !

■ ■ ■

बदलता युग

लो बदलता है ज़माना !

ज्वाल जग में लग गई है,
आग जीवन की नई है,
जल रहा है जीर्ण जर्जर, टूट मिटता सब पुराना !
लो बदलता है ज़माना !

ध्वंस की लपटें भयंकर
छा रहीं सारे गगन पर
वेग अधुनाधुंध है, जिसका असम्भव है दबाना !
लो बदलता है ज़माना !

बढ़ रहा प्रत्येक जन-जन
रोशनी में मुक्त कन-कन
वास्तविकता सामने आई, न अब कोई बहाना !
लो बदलता है ज़माना !

रोष इससे तुम करो ना
द्रोह साँसें भी भरो ना
यह सतत बढ़ता रहेगा, व्यर्थ काँटों को बिछाना !
लो बदलता है ज़माना !

■ ■ ■

बदल रही है...

(व्यंग्य कविता)

बदल रही है आज हमारी पहली नक़ली तसवीर,
(खाओ भूखो ! हलवा पूरी और गरम मीठी खीर !)

बदल रही है आज हमारी फटी पुरानी पोशाक़,
(अब न कटाना जग के सम्मुख अपनी यह ऊँची नाक !)

बदल रही है आज हमारी डर की हलकी आवाज़,
(दूर बहुत ही दूर भगी है अब तन की मन की लाज !)

बदल रही है आज हमारी यह जाड़ों मारी शॉल,
(आज बनालो भैया अपनी मोटी नव-चादर लाल !)

■ ■ ■

मेरे देश में

आज मेरे देश के आकाश पर
काली घटाएँ वेदना की घिर रही हैं !
कड़कड़ा कर गाज
टूटे, फूस-मिट्टी के
हज़ारों छप्परों पर गिर रही है !
और गहरा हो रहा है
ज़िन्दगी की शाम का फैला अँधेरा,
पड़ रहा चमगादड़ों का, उल्लुओं का,
मौत के सौदागरों का,
खून के प्यासे हज़ारों दानवों का,
ज़िन्दगी के दुश्मनों का
भूत की छाया सरीखा आज डेरा !
कर दिये वीरान
कितने लहलहाते खेत जीवन के
सुनाई दे रहे स्वर
दुख अभावों और क्रन्दन के !
करोड़ों मूक जनता आज भूखी है,
विवशता के धुएँ में
मुश्किलों से साँस लेती है !
किसी के द्वार पर दम तोड़ देती है !
कि निर्बल हड्डियों का
क्षीण पंजर छोड़ देती है !!



रक्षा

(व्यंग्य कविता)

डूबे गाँव, वढ़ी है बाढ़ !
नदी के कूल गये पथ भूल,
कि चारों ओर मचा है शोर !
सेठों के रक्षक दल भागे
आगे-आगे,
बिड़ला-डालमिया ने धोती-कम्बल बाँटे,
बनकर दान-दया के वीर !
चलाकर मीठे रस के तीर !
दिये हैं अपने घर के चीर !!
कल जब बाढ़ बढ़ेगी और,
भगे-उखडों को नहीं मिलेगी ठौर,
तब ये बाहर आधे नंगे रहकर
अपनी बैठक दे देंगे सत्वर,
और स्वयं सो जाएंगे यों ही
खोल 'कला-सज्जित-कक्ष' गरम !
जल से भीग गये हैं खूब,
तभी तो काँप रही है देह,
नहीं उठते हैं आज क़दम
लख कर पीड़ा गये सहम !
मज़लूमों की रक्षा हित
सेवा करने निकले,

बेदाग़ पहन कर कपड़े,
देने आश्वासन—
न डरो,
हम कर देंगे सभी व्यवस्था,
विधवा-आश्रम खुलवा देंगे,
धीरे-धीरे सब का ब्याह करा देंगे !
मरे हुओं को गंगा-यमुना में
या लकड़ी-इन्धन देकर पार लगा देंगे !
सच मानों, बेहद चिन्तित हैं प्राण,
हमारे कहते हैं अख़बार
'अर्जुन, नवभारत, विश्वमित्र, हिन्दुस्तान' !



धरती की पुकार

(व्यंग्य-मिश्रित कविता)

उट्ठो युवको !
धरती तुमसे जीवन माँग रही है !
जीवन तुमको देना होगा,
फिर चाहे
मोटी-मोटी हरियाली की लोई में
मुँह ढक कर सो जाना,
खेतों-खलिहानों के अथवा
गेहूँ-चावल के
सपनों में खोजाना !
पर, आज अभी तो जगना होगा,
पीली-पीली लपटों में तपना होगा,
आगे-आगे
लम्बे-लम्बे कदमों को रखना होगा,
पथ के काँटों की नोकों को
फ़ौलादी पैरों की रेती से घिसना होगा !
आओ युवको !
धरती तुमसे धड़कन माँग रही है !
बदले में जितनी चाहो तुम
उसकी ज्वाला ले सकते हो,
पर, अपने प्राणों की धड़कन
उसमें भरनी होगी !

यदि मृत्युञ्जय बन कर रहना है,
यदि निर्भय ग्रन्तर की बातें कहना है,
तो इस क्षण
ग्रपने से ऊपर उठना होगा,
फिर चाहे
हँसती दुनिया की तसवीर
बनाने में जुट जाना,
भूखों-नंगों को
ग्रपनी बाँहों में भर लाना !

■ ■ ■

मालवा में अकाल

अकाल-ग्रस्त मालवा !
हताश जन, निराश जन
भूख, भूख, भूख !
नष्ट होगई फ़सल,
दरअसल ?
दूर-दूर से उदास
छोड़ गाँव आरहे
कुटुम्ब के कुटुम्ब,
और यह अवन्तिका नगर
कि कालिदास की प्रसिद्ध कर्म-भूमि
घिर गई अकाल से !
दैत्य भूख का खड़ा हुआ अकड़,
खोल सर्व-भक्ष्य-मुख !
पर, अकाल है गरीब के लिए,
दर्द, भूख, त्रास, दुःख हैं गरीब के लिए,
मिट रहा अशक्त सिर्फ़ वर्ग यह !
सेठ के मकान में भरा अनाज है,
ज़मीदार के मकान में भरा अनाज है,
कौन जीव एक जो उदास ?
घूमते अबंध मूर्ख से कठोर,
लाल-लाल दाँत पान से रँगे बता रहे
समूह के समूह का निकाल रक्त पी चुके !

सफ़ेद वस्त्र सूक्ष्म तार-तार से बना पहन
एक क्या अनेक कह रहे–
'कि मिल रहा न ज्वार-बाजरा।'
गेहुँ से भरी हुई
अजीब तोंद ले !
(विषम प्रयास स्वाभिमान का)
उठो किसान औ' मजूर
एकता तुम्हें बुला रही,
अकाल ग्रस्त, त्रस्त जब
समस्त मालवा !



अमन की रोशनी

युद्ध-अन्धकार-वक्ष फाड़
जगमगा रही नवीन शान्ति की किरण !
जंगखोर-शक्ति के
तमाम व्यूह तोड़
बढ़ रहे सशक्त विश्व के चरण !
आसमान में असंख्य हाथ उठ रहे
कि हम बिना
समस्त युद्ध-सर्प-दंश काटकर,
व बर्बरों के हाथ से
सरल सुशील सभ्यता-वधू निकालकर
न चैन से कभी भी बैठ पाएंगे !
असंख्य दृष्टियाँ लगी हुईं
नवीन राह पर,
कि हम
बिना प्रभात के हुए
व तामसी निशा विनाश के हुए
(नहीं-नहीं !)
अपार नींद के समुद्र में
कभी न डूब पाएंगे !
क्योंकि बद्ध-द्वार युद्ध-दुर्ग के खुले,
व शक्ति के प्रहार से

तमाम अस्त्र-शस्त्र ध्वस्त हो रहे !
जंगबाज़
(जो कि विश्व का उलूक वर्ग है !)
अमन की रोशनी से त्रस्त हो रहे !!

■ ■ ■

जंगबाज़

लड़खड़ा रहे तमाम जंगबाज़,
टूटकर बिखर गया
कुचाल-साज़ !
जागरूक विश्व ने दिया रहस्य खोल,
असलियत बता रहा मनुष्य
पीट ढोल !
चोर और मुफ़्तखोर बौखला रहे–
कि ख़ून हम बहा रहे
किसी न स्वार्थ-सिद्धि के लिए,
वरन्
स्वतन्त्रता, विकास, लोकतन्त्र के लिए !
पर, प्रकट हुए वही
अभाव रोग कोढ़
मौत-ग्रस्त भुखमरी
अनेक आफ़तें बुरी-बुरी
सदैव ही रहीं घिरी;
समझ गया हरेक व्यक्ति आज
ये तभी
तमाम लड़खड़ा रहे हैं जंगबाज़ !



ज़िन्दगी कैसे बदलती है !

यह झोंपड़ी है फूस की,
जिसकी पुरानी भग्न दीवारें
व ग्राधी छत खुली
इस रात में—
जो है बड़ी ठंड़ी,
खड़ी है मौन, तम से ग्रस्त !
उसमें ले रहे हैं साँस
कोई तीन प्राणी,
हार जिनने ग्राज तक किंचित न मानी !
भूमि पर लेटे हुए,
गुदड़ी समेटे ग्रौर गट्ठर से बने
निज ज्वाल-जीवन से हरारत पा
कुहर के बादलों में
गर्म साँसें छोड़ते हैं !
ग्रौर उसका शक्तिशाली उर
दवाकर भेदते हैं ! !
भग्न यदि दीवार है
पर, भग्न ग्राशा है नहीं !
विश्वास धूमिल
ग्रौर दृढ़ ग्रावाज़ बंदी है नहीं !
कल देख लेना
ज़िन्दगी कैसे बदलती है !



नई नारी

तुम नहीं कोई
पुरुष की ज़र-खरीदी चीज़ हो,
तुम नहीं
ग्रात्मा-विहीना सेविका
मस्तिष्क-हीना सेविका,
गुड़िया हृदय-हीना,
नहीं हो तुम
वही युग-युग पुरानी
पैर की जूती किसी की,
ग्रादमी के
कुछ मनोरंजन-समय की वस्तु केवल !
तुम नहीं कमज़ोर,
तुमको चाहिए ना सेज फूलों की !
नहीं मँझधार में तुम
ग्रब खड़ी शोभा वढ़ातीं दूर कूलों की !
ग्रब दबोगी तुम नहीं
ग्रन्याय के सम्मुख,
नई ताक़त, बड़ा साहस
ज़माने का तुम्हारे साथ है !
ग्रब मुक्त कड़ियों से तुम्हारे हाथ हैं !
तुम हो न सामाजिक न वैयक्तिक
किसी भी क़ैदख़ाने में विवश,

अब रह न पाएगा
तुम्हारे देह-मन पर
आदमी का वश
कि जैसे वह तुम्हें रक्खे रहो,
मुख से न अपने
भूलकर भी कुछ कहो !
जग के करोड़ों आज युवकों की तरफ से
कह रहा हूँ मैं—
'तुम्हारा 'प्रभु' नहीं हूँ,
हाँ, सखा हूँ !
और तुमको
सिर्फ़ अपने
प्यार के सुकुमार-बंधन में
हमेशा बाँध रखना चाहता हूँ !'



मुक्ति-पर्व

यह वह दिवस है
कि जिस दिन हमारे चरण से
बँधी श्रृंखला दासता की
तड़क कर अवनि पर गिरी थी,
व सारे जगत् ने
बड़ी तेज़ आवाज़ जिसकी सुनी थी,
कि जिससे
सभी भग्न सोये हुओं की
थकी बंद आँखें खुली थीं,
व हर आततायी के पैरों की धरती हिली थी !
बुभुक्षित व शोषित युगों ने
नवल आश करवट बदलकर
बड़ी साँस लम्बी भरी जो
कि भय से उसी क्षण
सुदृढ़ देश साम्राज्यवादी सहम कर
मरण के क़दम पर गिरे,
और खोये
समय की सबल धार में !
क्योंकि निश्चय–
किसी पर किसी भी तरह
आज छाना कठिन है !
किसी को किसी भी भी तरह

अब दबाना कठिन है !
नई आग लेकर यह जागा तरुण है !
विरोधी ज़माने से लड़ना ही
जिसकी लगन है !

यह वह दिवस है
कि जिस दिन हटा आवरण सब
हमारे गगन पर
नई रोशनी ले नया चाँद आया,
अँधेरी दिशा चीर कर जगमगाया,
बड़ा आत्म-विश्वास लाया–
नहीं यह तिमिर अब घिरेगा
न आँखों पर परदा प्रलय का गिरेगा,
न उर-वेदना रात-भर नृत्य करती रहेगी,
नहीं दुःख की और नदियाँ बहेंगी !

उभरती जवानी नई है !
वतन की कहानी नई है !
रुकावट सहायक बनी है,
प्रखर युग रवानी यही है !
विजय की निशानी यही है !

यह वह दिवस है
कि जिस दिन नई ज़िन्दगी ने
सहज मुसकरा मुग्ध चूमे हमारे अधर थे !
खुले कोटि अभिनव प्रबल मुक्त स्वर थे !
मनाई थीं हमने
विभा–ज्ञान–त्योहार खुशियाँ,

स्वयं आन तक़दीर नाची,
व हम गा रहे थे !
कि दुनिया के सम्मुख
बड़ी तेज़ रफ़्तार से बढ़
भगे जा रहे थे !
शिराओं में लहरें नए ख़ून की भर !
निडर बन,
सहारे बिना,
और देशों को लड़ने की ताक़त
दिये जा रहे थे !
पुराने सभी घाव घातक
सिये जा रहे थे !
नई भूमि पर
एक नव शान्त बस्ती
बसाये चले जा रहे थे !
करोड़ों सजग औरतों के नयन थे,
करोड़ों सबल व्यक्तियों के चरण थे,
कि जो देश का चेहरा सब
बदलने खड़े थे !
बुरी रीतियों से
कड़ी आफतों से लड़े थे !

यह वह दिवस है
कि जिस दिन हमारी हरी भूमि पर
फूल नूतन खिले थे !
कि बरसों के बिछुड़े हुए फिर मिले थे !
युगों-बद्ध सब जेलखाने खुले थे !

कि हँसते हुए विश्व-स्वाधीनता के सिपाही
विजय गान गाते
सुखद साँस भर आज बाहर हुए थे !
अनेकों सुहागिन ने जिस दिन को लाने
स्वयं माँग सिन्दूर पोंछा
वही यह दिवस है !
वही यह दिवस है !
सफल आक्रमण का,
अथक त्याग, बलिदान, आन्दोलनों का,
जगत जागरण का,
क्षुधित नग्न पीड़ित जनों का,
दबी धड़कनों का !



अभियान

क्रम

मशाल

बिखर गये हैं ज़िन्दगी के तार-तार
रुद्ध द्वार, बद्ध हैं चरण,
खुल नहीं रहे नयन;
क्योंकि कर रहा है व्यंग्य
बार-बार देखकर गगन !
भंग राग-लय सभी
बुझ रही है ज़िन्दगी की आग भी !
आ रहा है दौड़ता हुआ
अपार अंधकार !
आज तो बरस रहा है विश्व में
धुआँ, धुआँ !

× ×

शक्ति लौह के समान ले
प्रहार सह सकेगा जो
जी सकेगा वह !
समाज वह-
एकता की शृंखला में बद्ध,
स्नेह-प्यार-भाव से हरा-भरा
लड़ सकेगा आँधियों से जूझ !

× ×

नवीन ज्योति की मशाल
आज तो गली-गली में जल रही,

अंधकार छिन्न हो रहा,
अधीर–त्रस्त विश्व को उबारने
अभ्रांत गूँजता अमोघ स्वर,
सरोष उठ रहा है बिम्ब–सा
मनुष्य का सशक्त सर!

■ ■ ■

कहाँ अवकाश ?

हमको कहाँ अवकाश है ?

जब मौत से हम लड़ रहे,
प्रतिपल प्रगति कर बढ़ रहे,
ये राह के कंटक सभी
लो धूल में अब गड़ रहे,
करना अँधेरे का हमें बढ़कर अभी ही नाश है !
हमको कहाँ अवकाश है ?

हमने न देखे शूल भी,
हमने न देखी धूल भी,
हमने न देखे राह के
हँसते हुए मधु फूल भी,
हमने न जाना प्यार क्या औ' मोह का क्या पाश है !
हमको कहाँ अवकाश है ?

हम हैं नहीं जो कल रहे,
हम चाल अपनी चल रहे,
क्या हार में, क्या जीत में
हम एक-से प्रतिपल रहे,
दुनिया बदलने के लिए अभिनव अटल विश्वास है !
हमको कहाँ अवकाश है ?



ग्रीष्म

तपता अम्बर, तपती धरती, तपता रे जगती का कण-कण!

त्रस्त विरल सूखे खेतों पर बरस रही है ज्वाला भारी
चक्रवात, लू गरम-गरम से झुलस रही है क्यारी-क्यारी,
चमक रहा सविता के फैले प्रकाश से व्योम-अवनि-आंगन !
तपता अम्बर, तपती धरती, तपता रे जगती का कण-कण !

जर्जर कुटियों से दूर कहीं सूखी घास लिये नर-नारी,
तपती देह लिए जाते हैं, जिनकी दुनिया न कभी हारी,
जग-पोषक स्वेद बहाता है, थकित चरण ले बहते लोचन !
तपता अम्बर, तपती धरती, तपता रे जगती का कण-कण !

भवनों में बंद किवाड़ किये बिजली के पंखों के नीचे,
शीतल खस के परदे में जो पड़े हुए हैं आँखें मींचे,
वे शोषक जलना क्या जानें जिनके लिए खड़े सब साधन !
तपता अम्बर, तपती धरती, तपता रे जगती का कण-कण !

रोग-ग्रस्त, भूखे, अधनंगे, दमित, तिरस्कृत शिशु दुर्बल,
रुग्ण दुखी गृहिणी जिसका क्षय होता जाता यौवन अविरल,
तृप्त दुपहरी में ढोते हैं मिट्टी की डलियाँ, फटे चरण !
तपता अम्बर, तपती धरती, तपता रे जगती का कण-कण !



पराजय

मिल रही है हार !

मनुज का व्यवहार क्या,
सभ्यता विस्तार क्या,
स्वार्थ की दुर्भावना से मिट रहा संसार !
मिल रही है हार !

ज्वार-पूरित पूर्ण सागर,
ग्रौर नौका क्षीए जर्जर,
है बड़ा पागल मनुज जो तोड़ता पतवार !
मिल रही है हार !

खींचता प्रतिपल प्रलोभन,
मिट रहा है मुक्त जीवन,
कह रहा, पर छल भरे स्वर, 'ग्राज नवयुग द्वार !'
मिल रही है हार !

■ ■ ■

बेबसी

आज पड़े प्राणों के लाले !

धरती पर वैषम्य बड़ा है,
हर पथ पर हैवान खड़ा है,
घोर निराशा के जीवन में आज घुमड़ते बादल काले !
आज पड़े प्राणों के लाले !

रोटी पर संघर्ष मचा है,
जिससे कोई भी न बचा है,
मानव, मानव से लड़ता है, ले भीषण हथियार निराले !
आज पड़े प्राणों के लाले !

अब जगती में आग लगेगी,
विद्रोही हुंकार जगेगी,
क्या अब वैभव रह पायेगा जीवित, उन घड़ियों को टाले !
आज पड़े प्राणों के लाले !

इतिहास बने बलिदानों का,
उत्सर्ग करो निज प्राणों का,
पीड़ित मानवता की जय हित, ओ कवि ! प्रेरक गाने गा ले !
आज पड़े प्राणों के लाले !



नारी

चिर-वंचित, दीन, दुखी बंदिनि ! तुम कूद पड़ीं समरांगण में,
भर कर सौगन्ध जवानी की उतरीं जग-व्यापी क्रंदन में,
युग के तम में दृष्टि तुम्हारी चमकी जलते अंगारों-सी,
काँपा विश्व, जगा नवयुग हृत-पीड़ित जन-जन के जीवन में !

अब तक केवल बाल बिखेरे, कीचड़ और धुएँ की संगिनि,
बन, आँखों में आँसू भर कर, काटे घोर विपद के हैं दिन,
सदा उपेक्षित, ठोकर-स्पर्शित, पशु-सा समझा तुमको जग ने,
आज भभक कर सविता-सी तुम निकली हो बनकर अभिशापिन !

बलिदानों की आहुति से तुम भीषण हड़कम्प मचा दोगी,
संघर्ष तुम्हारा न रुकेगा, त्रिभुवन को आज हिला दोगी,
देना होगा मूल्य तुम्हारा, पिछले जीवन का ऋण भारी,
वरना यह महल नये युग का मिट्टी में आज मिला दोगी !

समता का, आज़ादी का नव-इतिहास बनाने को आईं,
शोषण की रखी चिता पर तुम तो आग लगाने को आईं,
है साथी जग का नव-यौवन, बदलो सब प्राचीन व्यवस्था,
वर्ग-भेद के बन्धन सारे तुम आज मिटाने को आईं !



प्रभंजन

आ रहा तूफ़ान है,
जीत का वरदान है,
शक्ति का ही गान है,
देश के अभिमान पर प्राण का बलिदान है!
आ रहा तूफ़ान है!

स्वत्व का संग्राम है,
आज कब विश्राम है
युद्ध जब प्रतियाम है?
गर्व मिथ्या नष्ट है, स्वार्थ का क्या काम है?
स्वत्व का संग्राम है!

विश्व में पाखंड जो
द्वन्द्व है उद्दंड जो
कँप रहा भूखंड जो
अग्नि में सब जल रहा, हो रहा है खंड जो!
विश्व में पाखंड जो!

मुक्ति का उपहार है
स्नेहमय संसार है
शांति की झंकार है
लूट शोषण नाश की नीति पर अधिकार है!
मुक्ति का उपहार है!

क्रांति का इतिहास है,
पास में विश्वास है
सृष्टि में मधुमास है,
विश्व की बढ़ती हुई मिट रही अब प्यास है !
क्रांति का इतिहास है !

छिप चुके कटु शूल हैं
खिल रहे मधु फूल हैं
क़ौन जो प्रतिकूल है ?
देख जीवन आज का कह रहा जो, 'भूल है !'?
छिप चुके कटु शूल हैं !



नया सबेरा

सबेरा नया ग्रा रहा है !

युगों का अँधेरा मिटा कर,
बड़ा लौह-परदा हटा कर,
सबेरा नया ग्रा रहा है !

नई रोशनी में नहा कर,
पुराना गला सब बहा कर,
सबेरा नया ग्रा रहा है !

नवल-शक्ति दुर्जेय भरता,
सबल शत्रु पर वार करता,
सबेरा नया ग्रा रहा है !

मनुज को नये गान देता,
सरल स्नेह मुसकान देता,
सबेरा नया ग्रा रहा है !



तुलसीदास

ओ महाकवि !
गा गये तुम गीत जीवन के मरण के,
भाव-पूरक, मुक्त मन के !
सत्य, शिव, सौन्दर्य-वाहक !
गीत जो अभिनव अमर
धरती गगन के !
हैं अपार्थिव और पार्थिव
लोक के परलोक के।
साहस, प्रगति नव-चेतना,
नव-भावना, नव-कल्पना
आराधना के गीत !
जिनमें गूँजता है प्राणमय संगीत–
मानव हो न किञ्चित देखकर तू
काल के निर्दय भयंकर रूप से भयभीत,
निश्चय मनुजता की लिखी है जीत !
ओ अमर साधक !
नई अनुभूतियों के देव,
तुमने जीर्ण संस्कृति का किया उद्धार,
श्रद्धा से झुकाता शीश यह संसार

छा रहा था भय
कि जब मानव भटकता था अँधेरे में,

विवशता के कठिन आतंक-घेरे में;
धुआँ चहुँ ओर झूठे धर्म का
जब घिर रहा था व्योम में,
औ' वास्तविकता जा छिपी थी
चक्र, कुण्डल, मंत्र, नाड़ी की
विविध निस्सार माया में,
भ्रमित था जग सकल
उलझी अनोखी रीतियों में,
तब उठे तुम
और तुमने थाह ले ली
पूर्ण 'मानस' भाव के बहते समुन्दर की !
किया विद्रोह अविचल
बन गया जो त्रस्त, पीड़ित, नत
मनुजता का सबल सम्बल !



तुलसीदास

महाकवि तुम, तुम्हारा गीत
सच, हम गा नहीं सकते !
अँधेरा छा रहा था जब कि तुम आये;
किन्तु
वह सारा धुआँ छल का
बिखर कर उड़ गया
ज्योंही तुम्हारे स्वर
गगन में मुक्त मँडराये !
कि तुमको देखकर
लाखों दुखी जन के नयन
सुख-वारि से भर डबडबाये !
और उजड़े भग्न, हत, वीरान घर-घर में
नई आशा, नए विश्वास के दीपक
विपद् कर भंग
फिर से टिमटिमाये !
तुम्हारी ज्योति के सम्मुख
तिमिर-पट छा नहीं सकते !
महाकवि तुम, तुम्हारा गीत
सच, हम गा नहीं सकते !

धरा पाकर तुम्हें जब मुसकराई थी
बड़े उत्साह से प्रति प्राण में

नव-चेतना आकर समाई थी !
तुम उसी जन-भावना के बन गये वाहक
अमर हे संत !
संस्कृति के विधायक
हम तुम्हारी थाह जीवन में
कभी भी पा नहीं सकते !
महाकवि तुम, तुम्हारा गीत
सच, हम गा नहीं सकते !



प्रेमचन्द

आ कथाकार !
युग के सजग, मुखरित, अमिट इतिहास,
जन–शक्ति के अविचल प्रखर विश्वास !
द्रष्टा थे भविष्यत् के;
धनी भावों-विचारों के !
अमर शिल्पी
मनुज उर के
अकृत्रिम, सूक्ष्म-विश्लेषक !
सितारे तीव्र
मेघाच्छन्न जीवन के गगन के,
रूढ़ियाँ–बन्धन शिथिल तुमने किये
अपनी अरुक दृढ़ लेखनी के बल !
सभी ये थरथराईं
काल्पनिक, प्राचीन, झूठी, जन-विरोधी
धारणाएँ, मान्यताएँ;
धर्म-ग्रंथों से बँधी
निर्जीव, मिथ्या, शून्य की बातें
अनोखी, खोखली
जो हो रही थीं प्रगति-बाधक !
पतित साम्राज्यवादी शक्तियों का
नग्न चित्रण कर
बनायी भूमिका
जन बल अथक–संघर्ष की !

ओ अमर साधक !
सतत चिंतित रहे तुम
स्वर्ग धरती को बनाने !
अभय सामाजिक सुधारक,
युग-पुरुष !
तुमको, तुम्हारी ज्योति को
क्या ढंक सकेंगी काल-रेखाएँ ?
नहीं अब शेष साहस जो
अँधेरा सिर उठाये !
तुम प्रगति-पथ की
नई ज्योतित दिशा का
मार्ग-दर्शन कर रहे हो !
प्राण में बल भर रहे हो !

■ ■ ■

गाँधी

मानव-संस्कृति के संस्थापक, नव आदर्शों के निर्माता,
आने वाली संस्कृति के तुम निश्चय, जीवन भाग्य-विधाता !

सत्य अहिंसा की सबल नींव पर, सार्थक निर्मित किया समाज,
देश-देश में नगर-नगर में गूँज उठी नयी-नयी आवाज़ !

सदियों की निष्क्रियता पर तुम कर्म दूत बनकर उदित हुए,
विगत युगों के भौतिक-शृंग तुम्हारी धारा से विजित हुए !

नैतिक-हीना सघन निशा में, ध्रुव ! दिया तुम्हीं ने सतत प्रकाश,
घिरे निराशा के घन में तुमने, भरदी तड़ित-चमक-सी आश !



गाँधी

त्रस्त, दुर्बल विश्व को सुख, शक्ति के उपहार हो तुम !

मनुज जीवन जब जटिल, गतिहीन होकर रुक गया है,
शृंखलाएँ बंधनों की तोड़ता जब थक गया है,
दमन, अत्याचार, हिंसा से प्रकम्पित झुक गया है,
एक सिहरन, नव-प्रगति के, शांति के अवतार हो तुम !
त्रस्त, दुर्बल विश्व को सुख, शक्ति के उपहार हो तुम !

कर युगान्तर युग-पुरुष तुम स्वर्ण नवयुग ला रहे हो,
नग्न-पशु-बल-कर्म गाथा तुम सुनाते जा रहे हो,
मुक्त बलि-पथ पर निरन्तर स्नेह-कण बरसा रहे हो,
धैर्य, नूतन चेतना, उत्साह के संसार हो तुम !
त्रस्त, दुर्बल विश्व को सुख, शक्ति के उपहार हो तुम !

पीड़ितों, वंचित-दलित-जन के उरों में आश भर-भर,
प्राणमय, संदेशवाहक, साम्य का नव गीत गा कर,
मुक्त उठने के लिये तुम दे रहे हो पूर्ण अवसर,
देख मानवता जगी, दुर्जेय कर्णधार हो तुम !
त्रस्त, दुर्बल विश्व को सुख, शक्ति के उपहार हो तुम !



गाँधी

प्राची के उगे तुम सूर्य
सहसा बुझ गये !
पर, तुम्हारी
फैलती ही जारही है ज्योति !
दिग-दिगन्तों में समा,
अति शीत 'ईथर' के
असीमित तम किनारों तक,
कि मन की सूक्ष्मतम सब
घाटियों के अंध तम से बंद
पट ज्योतित !
तुम्हारी दिव्य शाश्वत
आत्मा के तेज से
ये धुल गये
जीवन-मलिनता के
अशिव सब भाव !
युग-युग की दबी
खंडित धरित्री पर
गई बह सत्य-अमृत धार !
तुमने कर दिया
उपचार घावों का,
मनुजता के सभी

आधार दावों से !
जगत को कर दिया आश्वस्त
देकर मुक्त विश्व-विधान;
जो सुखमय भविष्यत् का
अमर वरदान !



गाँधी

तुमने बुझते
युग-मानव के उर-दीपक में
निज जीवन का संचित स्नेह ढाल
अभिनव ज्योति जगायी है !
पर, उस दिन को जोह रहे हम
जब कह पाएँ
किरणों की आभा में जिसकी
सुन्दर जगमग झाँकी भव्य सजायी है !
मानवता की मानों हुई सगाई है !
नव-मानव शिशु को तुमने जन्म दिया,
जीने का अधिकार दिया,
निर्मल सुख शांति अमर उपहार दिया,
होठों को निछल मुक्त हँसी का
वरदान दिया,
कोटि-कोटि जन को रहने को
आज़ाद नया हिन्दुस्तान दिया !
जिसके नभ के नीचे
सत्य, अहिंसा का नूतन फूल खिला,
फैली बर्बर जर्जर संस्कृति के भीतर
ज्ञान-सुगन्ध हवा;
जिसने पीड़ित जन-जन का ताप हरा !
तुमने भरली अपने उर में

युग की सारी मर्म-व्यथा।
जिसको क्षण भर देख लिया केवल
उसने समझा अब जीवन पूर्ण सफल !
याद तुम्हारी शोषित दुनिया का संबल !
एक दिवस उट्ठेगा निश्चय
सोया, भूला समुदाय
तुम्हारा ही प्रेरक-स्वर सुनकर !



गाँधी

आज हमारी श्वासों में जीवित है गाँधी,
तम के परदे पर मन के ज्योतित है गाँधी,
जिससे टकरा कर हारी पशुता की आँधी !

सिहर रही हैं गंगा, यमुना, झेलम, लूनी,
प्राची का यह लाल सबेरा लख कर खूनी,
आज कमी लगती जग को पहले से दूनी !

पर, चमक रही है मानव आदर्शों की ज्वाला,
जिसको गाँधी ने तन-मन के श्रम से पाला,
हर बार पराजित होगा युग का तम काला !

बुझ न सकेगी यह जन-जीवन की चिनगारी,
बढ़ती ही जायेगी इसकी आभा प्यारी,
निश्चय ही होगी वसुधा आलोकित सारी !

■ ■ ■

युग की सारी मर्म-व्यथा।
जिसको क्षण भर देख लिया केवल
उसने समझा अब जीवन पूर्ण सफल !
याद तुम्हारी शोषित दुनिया का संबल !
एक दिवस उट्ठेगा निश्चय
सोया, भूला समुदाय
तुम्हारा ही प्रेरक-स्वर सुनकर !



गाँधी

आज हमारी श्वासों में जीवित है गाँधी,
तम के परदे पर मन के ज्योतित है गाँधी,
जिससे टकरा कर हारी पशुता की आँधी !

सिहर रही हैं गंगा, यमुना, झेलम, लूनी,
प्राची का यह लाल सबेरा लख कर ख़ूनी,
आज कमी लगती जग को पहले से दूनी !

पर, चमक रही है मानव आदर्शों की ज्वाला,
जिसको गाँधी ने तन-मन के श्रम से पाला,
हर बार पराजित होगा युग का तम काला !

बुझ न सकेगी यह जन-जीवन की चिनगारी,
बढ़ती ही जायेगी इसकी आभा प्यारी,
निश्चय ही होगी वसुधा आलोकित सारी !

■ ■ ■

मालवानां जयः

वर्ष बीते दो हज़ार !
बढ़ रहे थे देश में जब
क्रूर-अत्याचार नित हूणों-शकों के,
और जनता खो रही थी
आत्म-गौरव, शक्ति अपनी,
सभ्यता, सम्मान अपना !
धर्म, संस्कृति का पतन
जब हो रहा था तीव्र गति से,
छा रहे थे भय-निराशा मेघ आ-आ,
संगठित भी थी नहीं जब
वीर मालव-जाति सारी,
राष्ट्र गौरव भूलकर
संकीर्ण बनते जारहे थे
मालवों के हृदय दुर्बल !
नष्ट होता जा रहा था
सब पुरातन स्वस्थ वैभव !
छा रहा था देश में
गहरा अँधेरा जब भयंकर,
रात दुख की बढ़ रही थी
नाश के साधन अमित एकत्र कर !
ठीक ऐसे ही समय
ज्योति देखी विश्व ने,

नव जागरण के स्वर सुने !
उजड़े हुए, बिगड़े हुए,
मिटते हुए, सोते हुए
इस देश के जन-प्राण को
आ वीर विक्रम ने जगाया !
संगठन कर पूर्ण बिखरी शक्ति का
संसार को अनुभव कराया—
मिट नहीं सकते कभी हम,
त्याग हम में है अपरिमित,
बाहुओं में बल अमित,
उद्घोष करते हैं—
अभय मालव, अभय भारत !
अमर मालव, अमर भारत ! !



विहान

क्रम

जलो-जलो

संघर्षों की ज्वाला में जलो, जलो !

बलिदान-त्यागमय जीवन हो,
कारागृह भी शांति-सदन हो,
जन-हित, बीहड़ पथ पर भी चलो, चलो !
संघर्षों की ज्वाला में जलो, जलो !

तम से ग्रस्त अवनि ज्योतित हो,
मुरझाया उपवन कुसुमित हो,
मधुऋतु के हित युग-हिम में गलो, गलो !
संघर्षों की ज्वाला में जलो, जलो !



जागो

जागो, हे जीवन जागो !

कूल बढ़े हैं नदियों के,
सोये जागे सदियों के,
मूक-व्यथाएँ खो जाएँ, बंदी युग-यौवन जागो !
जागो, हे जीवन जागो !

उत्सर्ग भरे गानों से,
प्राणों के बलिदानों से,
त्रस्त मनुज के उद्धारक हे नवयुग के मन जागो !
जागो, हे जीवन जागो !

चंचल चपला के उर में,
ज्वालागिरि के अंतर में,
जो हलचल; उसको लेकर, जगती के कण-कण जागो !
जागो, हे जीवन जागो !



नव-पथ-राही

हम नव-जीवन-पथ के राही !

नई व्यवस्था के संचालक, उन्मुक्त नये युग के मानव,
बहता निर्मल रक्त नसों में, हम में नव-गति, साहस अभिनव,
अंतिम पल तक संघर्ष अथक, अपराजित-बल, अक्षय-वैभव,
हम निर्भय, मानव-उद्बोधक, राग सुनाते हैं युग-भैरव,
करते ध्वस्त पुरातन जर्जर जग में लाकर दुर्दम विप्लव,
शीश हथेली पर रख कर हम बढ़ने वाले निडर सिपाही !

हम नव-जीवन-पथ के राही !

■ ■ ■

युग-गायक

गीत गाता जा रहा हूँ !

रक्त की संस्कृति मिटाने को सुनाता हूँ नये स्वर,
मैं दिशा भूले जगत को हूँ चलाता नव डगर पर,
हर मनुज को घोर तम से रोशनी में ला रहा हूँ !
गीत गाता जा रहा हूँ !

कर रहा हूँ मैं नई युग-सृष्टि का अविराम चिंतन,
उस नये युग का कि जिसमें है जटिल जीवन न दर्शन,
और जिसको, साँस पर हर, पास अपने पा रहा हूँ !
गीत गाता जा रहा हूँ !

नग्न, दुर्बल, त्रस्त, पीड़ित, नत, बुभुक्षित जो रहे हैं,
दुःख क्या अपमान कटुतर ही सदा जिनने सहे हैं,
जो तिरस्कृत आज तक, उनको उठाता जा रहा हूँ !
गीत गाता जा रहा हूँ !



अभय

हैं अमर ये गान मेरे, है अमर मेरी कहानी !

हूँ नये युग का मनुज मैं, बद्ध हो पाया न जीवन,
मार्ग में रुकना कहाँ जब पा रहा युग का निमंत्रण,
यदि बदल पाया ज़माना, है तभी सार्थक जवानी !
हैं अमर ये गान मेरे, है अमर मेरी कहानी !

तोड़ बंधन आज जग को मुक्ति के पथ पर चला दूँ,
हर सड़े विश्वास मिथ्या खोद कर जड़ से बहा दूँ,
है यही कर्त्तव्य मेरा, इसलिए ही मुक्त वाणी !
हैं अमर ये गान मेरे, है अमर मेरी कहानी !

है नहीं भाता मुझे यह-दूर जा दुनिया बसाऊँ,
चाहता अति-तार स्वर से मैं प्रलय के गीत गाऊँ,
प्रतिध्वनित हो हर हृदय में, रागिनी खोये पुरानी !
हैं अमर ये गान मेरे, है अमर मेरी कहानी !



युग कवि

विश्व के उस पार की, कवि कौन है जो आज गाता ?

सुन न पड़ती अब अलंकृत रीति-कवि की और वाणी,
मिट चुकी बीते युगों की ईश की कल्पित कहानी,
विश्व ने नव-भावनाओं से नया जीवन रचा है;
अब विगत युग-भव्यता की कवि दुहाई दे न पाता !
विश्व के उस पार की, कवि कौन है जो आज गाता ?

आज नव-नव गीत मेरे, आज नव-नव गीत जग के
आज नवयुग, आज गतियुग, आज हम बंदी न अग के
लुप्त होती हैं व्यथाएँ और खिलते फूल नव-नव
अब न जीवन में अधूरे छोड़ जग अरमान जाता !
विश्व के उस पार की, कवि कौन है जो आज गाता ?

झूठ, मिथ्या-कल्पनाओं का नहीं है अब ठिकाना
मिट चुकी हैं पूर्ण जड़ से अब न उनका है बहाना
टिक सकीं बातें अरे क्या खोखली जो सब तरफ़ से
आज कण-कण ढह चुका है, कौन जो उनको उठाता ?
विश्व के उस पार की, कवि कौन है जो आज गाता ?



जय-बेला

विषाद की नहीं क़यामती-निशा,
न डर कि हिल रही है हर दिशा,
उफ़न रहा समुद्र क्रुद्ध हो,
हरेक व्यक्ति बस प्रबुद्ध हो !
दवारि, साथ लो नवीन जल
दलिद्र है सभी पुराण बल !

■ ■ ■

नया संसार

बन रहा इतिहास नूतन
जाग शोषित देख सम्मुख है नया संसार !

स्वार्थ में जब विश्व सारा डूब हिंसा कर रहा था,
मनुज अत्याचार से था त्रस्त प्रतिपल डर रहा था,
चल पड़ी तब घोर आँधी और विप्लव ज्वार !
बन रहा इतिहास नूतन
जाग शोषित देख सम्मुख है नया संसार !

नष्ट जिसमें हो गये सब आततायी क्रूर राक्षस,
और पूँजीवाद तानाशाह की तोड़ी गई नस,
मुक्त जनता-युग हमारे सामने साकार !
बन रहा इतिहास नूतन
जाग शोषित देख सम्मुख है नया संसार !



क़ैदी

रात्रि के नीरव प्रहर में
बज उठीं कड़ियाँ,
जब कठिन घड़ियाँ बिताना हो रहा था
याद सहसा आ गई–
खामोश ऐसी रात में ही
एक दिन
वे बज उठी थीं प्रिय तुम्हारे
पैर की पायल !
आज तो निस्तब्ध काली रात में
दृढ़ लौह-कड़ियों-सीखचों के बीच
रह-रह खनखनाती बेड़ियाँ निर्मम !
और बीते जा रहे
भावों-विचारों में थके-उलझे हुये कुछ क्षण !



तुम

तुम सहसा ग्रा ग्रालोक-शिखा-सी चमकीं !

जब तम में जीवन डूब गया था सारा,
सोया था दूर कहीं पर भाग्य-सितारा,
तब तुम ग्राश्वासन दे विद्युत-सी दमकीं !
तुम सहसा ग्रा ग्रालोक-शिखा-सी चमकीं !

सूखे तरुवर पतझर से प्रतिपल लड़कर
सर्वस्व गवाँ मिटने वाले थे भू पर,
तब तुम नव-बसंत-सी उर में ग्रा धमकीं !
तुम सहसा ग्रा ग्रालोक-शिखा-सी चमकीं !

जब पीड़ित ग्रन्तर ने ग्राह भरी दुख की,
जब सूख गई थीं सारी लहरें सुख की,
तब घन बनकर तुमने नीरसता कम की !
तुम सहसा ग्रा ग्रालोक-शिखा-सी चमकीं !



असह

अब न रहा जाता !

प्रिय, दूभर जीना;
मूक हृदय-वीणा,
आघात समय का अब न सहा जाता !
अब न रहा जाता !

करुण कथा कितनी,
गरल व्यथा कितनी,
लय में छंदों में अब न कहा जाता !
अब न रहा जाता !

जीवित नेह कहाँ ?
सुंदर गेह कहाँ ?
मन दुख-सरिता में अब न नहा पाता !
अब न रहा जाता !

हैं मौन सुखद स्वर,
जीवन शांत लहर,
बीहड़ पथ से रे अब न बहा जाता !
अब न रहा जाता !



निवेदन

अभिशाप भले ही दे दो, पर
वरदान नहीं देना मुझको !

जब सविता जैसा चमक पड़ूँ,
जब मधुघट बनकर छलक पड़ूँ,
तब लघुता मुझमें भर देना, अभिमान नहीं देना मुझको !
अभिशाप भले ही दे दो, पर
वरदान नहीं देना मुझको !

मूक गरीबी का साया हो,
जब सुख माया ही माया हो,
संघर्षों में मिटने देना, पर दान नहीं देना मुझको !
अभिशाप भले ही दे दो, पर
वरदान नहीं देना मुझको !



स्वावलम्ब

मैं बुझते दीपक का न कभी
धूमिल नीरव उच्छ्वास बना !

जीवन के कितने ही भ्रम में,
भूला न कभी अपने क्रम में,
मैं तो अविरल बहने वाली सरिता के उर की साँस बना !
मैं बुझते दीपक का न कभी
धूमिल नीरव उच्छ्वास बना !

मैं अपना खुद पतवार बना,
मैं अपना खुद आधार बना,
निज की निर्भरता पर रखता अविचल जीवित विश्वास घना !
मैं बुझते दीपक का न कभी
धूमिल नीरव उच्छ्वास बना !



नवयुग

रेशमी युगीन-तार हैं नये-नये !
ज़िन्दगी नई
अकाम भाव बह गये !
समाज से विलीन हो रही है पीर,
कंटका-विहीन हो रहा करीर
डाल-डाल स्वस्थ गुदगुदी
शुष्कता हृदय से हो चुकी जुदी !
देव-देव आज व्यक्ति हर
कर गया निडर निनार पान विष प्रखर !
यातुधान है वही कि जो
ज़रा अड़ा, ज़रा लड़ा
आग देखकर भगा, डरा....
है विदीर्ण अब प्रमाद
क्योंकि बन गया नवीन !
व्यर्थ आज उस मनुष्य का प्रयास
गर्व की पुकार
व्यर्थ, व्यर्थ, व्यर्थ !



प्रात

पवन के साथ भर कर डग
करो पूरा असीमित मग
दिखो वरदान-से दीपित
दिशाएँ हों सकल ज्योतित,

सबेरा आ, सबेरा आ!

बसेरा अब नहीं तेरा
उठा अपना सभी डेरा
किरण-भय से बिना स्वर कर
अभी उलटे चरण धर कर

अँधेरा जा, अँधेरा जा!



संध्या

नीला-नीला व्योम कि जिसमें छाये कुछ काले-काले घन,
संध्या की बेला है जगती का सूना-सूना-सा आँगन !
चरतीं भैंसें मैदानों में, कुछ मेड़ों खेतों के ऊपर,
धीरे-धीरे बजता है गति के क्रम से घण्टी का मधु-स्वर !
आँख-मिचौनी खेल रहे हैं मेघ निकट जा-जा सूरज के,
उड़ता लम्बी पाँत बनाकर बगलों का दल-बल सजधज के !
कवि ऊँचे टीले पर बैठा दिन का ढलना देख रहा है,
प्रकृति-वधू का चुप-चुप तन से वस्त्र बदलना देख रहा है !



बरसात

सांध्य का वातावरण धूमिल गहन तम में
छिप गया दिन भी शिशिर-सा शुष्क मौसम में !
तप्त धरती पर उमड़ कर छा रहे बादल
बह रहीं मोहक बयारें सिंधु से शीतल !
ताप में अब डूबती घड़ियाँ बिताओ मत
त्रस्त हो आकाश में आँखें लगाओ मत,
दूर दक्खिन से नई बरसात आई है
यह तभी बिजली गगन में दमदमाई है !



भिखारिन

सावन की घनघोर घटाएँ उमड़ी पड़ती थीं अम्बर में,
काशी के एक मुहल्ले में मैं बैठा था अपने घर में !
ऊपर की मंज़िल का कमरा था, शांत; परंतु किवाड़ खुले,
सूख रहे थे छाँह-गोख में कुछ धोती कपड़े धुले-धुले ।
सघन तिमिर की चादर ने छा सारी वसुधा ढँक डाली थी,
पर, थोड़ी-सी ज्योति गोख ने दीपक के कारण पा ली थी ।
धोती की फर-फर की आहट ने ली दृष्टि खींच जब सहसा,
नेत्र गड़े-से, स्वर मौन रहे उस क्षण की देख अजीब दशा !
करुणा की प्रतिमा-सी युवती चुपचाप खड़ी थी मुख खोले,
जिस पर थीं भय की रेखाएँ, सोच रही थी, क्या वह बोले ?
फटी-पुरानी साड़ी उलटे पल्ले की पहने थी नारी,
बिखरे-बिखरे सूखे केशों पर सुन्दरता थी बलिहारी !
श्याम-वर्ण था, कोकिल से भी मीठी थी जिसकी स्वर-लहरी,
वह बोल उठी हलके स्वर में, भर कर व्यथा हृदय में गहरी !
"कुछ ही महिने बीते मुझको बाबू बंगाला से आये,
अन्न-अकाल पड़ा था भारी, था जीना दुर्लभ बिन खाये,
भूख-भूख की इस ज्वाला में सारा परिवार विलीन हुआ,
घर का धन क्या,शिशुओं तक को बेचा, उर ममता-हीन हुआ !
जीवन के दुख-दुर्गम पथ पर नश्वर काया की अनुरागिन,
हाय रही जाने क्यों जीवित अब तक मैं ही एक अभागिन !
कुछ पैसों की भिक्षा को अब फिरती हूँ नगर-नगर घर-घर,
ऊब चुकी हूँ इस जीवन से, सचमुच, जग में रहना दूभर !

कुछ दे दो ओ बाबू ! तुम भी दुनिया में खूब फलो-फूलो !
भूखी और दुखी आत्मा की यही दुआ है, सुख में भूलो !"
फिर वह दुखिया आँसू भर कर इतना कह बैठ गई थक कर,
मैं सोच रहा था, दुनिया भी क्या है नग्न विषमता का घर !
मेरे उर में जाग उठी थी जीवन की उत्कट अभिलाषा,
पूछूँ इसका पूरा परिचय बतला देगी, थी कुछ आशा ।
फिर लिखने को युग की गाथा मिल जाएगा सच्चा जीवन,
मिल जाएगा अवसर, करने युग की हीन दशा का चित्रण ।
जाने कितने दिन की होगी भूखी-प्यासी यह सोच तनिक,
मैंने सोचा इन बातों को अच्छा हो टालूँ सुबह तलक ।
फिर उसको भोजन-आश्रय दे, मैं भी सोने तत्काल गया,
एक प्रहर इस उलझन में ही बीता कब होगा प्रात नया ।
सुबह-सुबह उठकर जब देखा केवल पाया अबला का शव,
इसी तरह दम तोड़ रहे हैं जग में जाने कितने मानव !
उसको कोई जान न पाया, कितना करुण अकेला जीवन,
कहना सचमुच, यह मुश्किल है, कितना मर्मांतक था वह क्षण !

